मणि मधुकर के उपन्यासों में अभिव्यक्त मारवाड़ का सामाजिक-सांस्कृतिक यथार्थ

एम.फिल. (हिन्दी) उपाधि हेतु प्रस्तुत लघु शोध–प्रबन्ध

शोध-निर्देशक
डॉ. ओमप्रकाश सिंह

शोध-छात्र
जितेश सिंह

भारतीय भाषा केन्द्र
भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अध्ययन संस्थान
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली-110067

2007-08

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
JAWAHARLAL NEHRU UNIVERSITY
CENTRE OF INDIAN LANGUAGES
SCHOOL OF LANGUAGE, LITERATURE & CULTURE STUDIES
NEW DELHI-110 067, INDIA

Dated 28/03/ 2008

DECLARATION

I declare that the work done in this dissertation entitled "MANI MADHUKAR KE UPANYASON MEIN ABHIVYAKT MARWAR KA SAMAJIK SANSKRITIK YATHARTH (SOCIAL AND CULTURAL REALITY OF MARWAR EXPRESS IN THE NOVEL OF MANI MADHUKAR)" by me is an original work and has not been previously submitted for any other degree in this or any other University/ Institution.

JITESH SINGH
(Research Scholar)

DR. OMPRAKASH SINGH
(SUPERVISOR)
CIL/SLL&CS/JNU

PROF. VIR BHARAT TALWAR
(CHAIRPERSON)
CIL/SLL&CS/JNU

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
JAWAHARLAL NEHRU UNIVERSITY
CENTRE OF INDIAN LANGUAGES
SCHOOL OF LANGUAGE, LITERATURE & CULTURE STUDIES
NEW DELHI-110 067, INDIA

Dated 20/03/ 2008

DECLARATION

I declare that the work done in this dissertation entitled "MANI MADHUKAR KE UPANYASON MEIN ABHIVYAKT MARWAR KA SAMAJIK SANSKRITIK YATHARTH (SOCIAL AND CULTUREL REALITY OF MARWAR EXPRESS IN THE NOVEL OF MANI MADHUKAR)" by me is an original work and has not been previously submitted for any other degree in this or any other University/ Institution.

JITESH SINGH
(Research Scholar)

DR. OMPRAKASH SINGH
(SUPERVISOR)
CIL/SLL&CS/JNU

PROF. VIR BHARAT TALWAR
(CHAIRPERSON)
CIL/SLL&CS/JNU

सादर समर्पित

अपने दोस्त कालूराम को

विषयानुक्रमणिका

		पृष्ठ संख्या
भूमिका		i - iv
अध्याय–1	**मारवाड़ का सामाजिक–सांस्कृतिक परिदृश्य**	1 – 19
	i. मारवाड़ का सामाजिक परिदृश्य	
	ii. स्त्रियों की स्थिति	
	iii. लोकोत्सव	
	iv. धार्मिक अंधविश्वास	
	v. खान–पान और परिधान	
	vi. आमोद–प्रमोद के साधन	
	vii. लोकसंस्कृति, लोकसंगीत और लोकनृत्य	
अध्याय–2	**मणि मधुकर की साहित्यिक यात्रा**	20 – 44
	i. जीवन–परिचय	
	ii. काव्य–यात्रा	
	iii. कहानी संसार	
	iv. नाटक एवं एकांकी साहित्य	
	v. उपन्यास साहित्य	
	vi. मणि मधुकर पर परिवेशगत प्रभाव	
	vii. मणि मधुकर पर अन्य रचनाकारों का प्रभाव	
	viii. मणि मधुकर और आंचलिकता	
अध्याय–3	**मणि मधुकर के उपन्यास और मारवाड़ का सामाजिक जीवन**	45 – 75
	i. जातीय वैमनस्य	
	ii. प्राकृतिक प्रकोप और पलायन की समस्या	
	iii. धार्मिक अंधविश्वास	
	iv. नारी की स्थिति	
	v. सेक्स विसंगति	

vi. वेश्या जीवन एवं अन्य समस्याएँ
vii. मानवीय सम्बन्धों की जटिलता और दाम्पत्य जीवन के बदलते प्रतिमान
viii. भ्रष्टाचार
ix. आधारभूत सुविधाओं का अभाव – (शिक्षा, पानी, चिकित्सा, यातायात आदि)

अध्याय–4 मणि मधुकर के उपन्यास और मारवाड़ का सांस्कृतिक जीवन 76 – 97

i. रहन–सहन एवं खान–पान
ii. रीति–रिवाज एवं लोकोत्सव
iii. सामासिक संस्कृति
iv. लोकगीत, लोकवाद्य एवं लोकनाट्य
v. लोक की भाषा

उपसंहार 98 – 101

संदर्भ–ग्रन्थ–सूची 102 – 106

भूमिका

रचनाकार अपनी आंतरिक उथल–पुथल, द्वन्द्व और विचारों को शब्दशः साहित्य में अभिव्यक्त करता है। अपने विचारों और भावनाओं को वह पात्र की आंतरिक मनःस्थिति के अनुसार शब्दों और प्रतीकों के माध्यम से व्यक्त करता है। मणि मधुकर के साहित्य में उनकी उन्मुक्त जीवनदृष्टि की छाप दिखाई देती है। उनकी जीवन दृष्टि स्पष्ट थी। इसी कारण उनकी रचनाओं में बनावटीपन नहीं झलकता। उनका लेखन कार्य सहज और यथार्थपरक है।

प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध में मणि मधुकर के साहित्य के माध्यम से मारवाड़ के जीवन–जगत और वहाँ की स्थानीय समस्याओं को क्रमबद्ध तरीके से विश्लेषित किया गया है। मणि मधुकर के साहित्य के प्रति गहरा लगाव और मारवाड़ी जन–जीवन की समस्याओं, वहाँ की सभ्यता–संस्कृति में रुचि होने के कारण ही मैंने यह शोध क्षेत्र निर्धारित किया। मणि मधुकर का साहित्य एक बदलते हुए युग की तस्वीर को जीवंत रूप देता है। उनका साहित्य मनुष्य के अकेलेपन के मनःताप, स्त्री जीवन की विडम्बनाएँ, जड़ता, कुण्ठा और भ्रष्ट राजनीति से संत्रस्त व्यक्ति की दास्तान है। भारत के राजनीतिक, सामाजिक और प्रशासनिक ढाँचे पर किया गया उनका व्यंग्य प्रहार आज भी अपनी प्रासंगिकता लिये हुए है।

मणि मधुकर के उपन्यासों में मारवाड़ की संस्कृति तो मुखरित हुई ही है, इनमें तद्युगीन साम्राज्यवादी रूढ़ियाँ एवं दोषयुक्त शासन प्रणाली को भी स्वर मिला है। दरअसल मणि मधुकर ऐसे उपन्यासकार हैं जो युग को समग्रता के साथ पकड़ते हैं। सर्वहारा वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले इनके प्रमुख पात्र शोषक वर्ग के दमन चक्र को भेदने के लिए संघर्षशील हैं। स्वाधीन भारत में भी साम्राज्यवादी और सामंतवादी प्रवृत्ति यथावत् रूप में विद्यमान हैं, इस तथ्य से मणि मधुकर भली भाँति परिचित थे। इसलिए स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत की राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक क्षेत्र में उत्पन्न असफलताओं के बाद जन्मी मध्यवर्गीय कुण्ठा, पीड़ा, निराशा और घुटन आदि मणि मधुकर के साहित्य में सर्वत्र विद्यमान है। उनकी अभिव्यक्ति इतनी स्वाभाविक जान पड़ती है कि मानो

साहित्यकार स्वयं भोक्ता हो –

"कभी खत्म नहीं होता है नरक
वह केवल जगह बदलता है या
यातना को नया रूप दे देता है।"

(घास का घराना, पृ. 49)

अनुभूति की प्रामाणिकता और अभिव्यक्ति की ईमानदारी के साथ ही परिवेश की विश्वसनीयता भी मणि मधुकर के साहित्य की विशिष्टता है। राजस्थान की सभ्यता और सामाजिक संवेग जिस तरह मणि मधुकर की रचनाओं में उभरते हैं, वह अपूर्व है। मरुभूमि के प्रति बढ़ते अनुराग की सार्थक अभिव्यक्ति उनके रचना संसार में देखी जा सकती है। ठेठ राजस्थानी भाषा में लिखी गई कविताएँ राजस्थानी लोकजीवन की मनोरम झांकी प्रस्तुत करती हैं। उनके साहित्य में प्रयुक्त लोकोक्ति और मुहावरे स्थानीय लोकजीवन की अभिव्यक्ति है।

मणि मधुकर का उपन्यास साहित्य परिवेशगत संवेदनाओं की स्पष्ट अभिव्यक्ति है, इसलिए इनके साहित्य में मेरी रुचि स्नातक की कक्षा से ही रही है। उनके उपन्यास साहित्य में स्वतन्त्रता के पश्चात् की आस्था–अनास्था, सुख–दुःख और भविष्य के स्वप्निल रंगों का इन्द्रधनुषी चित्रण हुआ है। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक विडम्बनाओं से ग्रस्त मध्यवर्गीय पीड़ाओं, कुण्ठाओं का यथार्थ चित्रण इनके सृजन का मुख्य विषय रहा है। मरुभूमि के प्रति अनन्य अनुराग रखने वाले मणि मधुकर कला साधना के प्रति समर्पित आस्था रखने वाले साहित्यकार हैं। इनका समग्र साहित्य स्थूल आँखों से देखा गया यथार्थ नहीं बल्कि हृदय के अन्तःतल का भोगा गया स्वानुभूत सत्य है। मणि मधुकर के साहित्य की यथार्थमय मार्मिकता ने मुझे आकर्षित किया।

मणि मधुकर 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध के लेखक थे। इस समय भारतीय समाज में सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और आर्थिक विडम्बनाएँ व्याप्त थी। मणि मधुकर ने उपर्युक्त समस्याओं को अपने साहित्य में अभिव्यक्ति दी है, यद्यपि ये समस्याएँ इक्कीसवीं सदी के भारत में भी अपने पैर पसारे हुए हैं। आज का भारतीय समाज अपने मिथ्याबोध व आडम्बरग्रस्त मानसिकता से मुक्ति नहीं पा सका है, इस सन्दर्भ में मणि मधुकर के उपन्यास अपनी व्यापकता को स्थापित करते हैं। मणि मधुकर के साहित्य में प्रगतिशील मूल्यों की स्थापना की गई है।

"मणि मधुकर के उपन्यासों में अभिव्यक्त मारवाड़ का सामाजिक, सांस्कृतिक यथार्थ" शीर्षक शोध–प्रबंध को मैंने अध्ययन की सुविधा के लिए चार अध्यायों में विभाजित किया है। समस्याओं के परत दर परत विश्लेषण के लिए इन अध्यायों को उप–अध्यायों में भी विभाजित किया गया है। लघु शोध प्रबंध का प्रथम अध्याय "मारवाड़ का सामाजिक–सांस्कृतिक परिदृश्य" है। इस अध्याय में मारवाड़ की सामाजिक विविधताओं जीवन अवसरों व जीवन–शैलियों को विवेचित–विश्लेषित किया गया है। सामाजिक भेदभाव, जाति–व्यवस्था, अस्पृश्यता, स्त्रियों की स्थिति, धार्मिक अंधविश्वास, आमोद–प्रमोद, परिधान, लोककलाएँ इत्यादि बिन्दु मारवाड़ के सामाजिक–सांस्कृतिक परिदृश्य को व्याख्यायित करते हैं। प्रथम इकाई में ही मारवाड़ के सांस्कृतिक संयोजन को भी रूपायित किया गया है।

द्वितीय अध्याय का नाम "मणि मधुकर की साहित्यिक यात्रा" है। इस अध्याय में मणि मधुकर का संक्षिप्त परिचय देते हुए उनके साहित्य का विवेचन–विश्लेषण किया गया है। मणि मधुकर की साहित्यिक यात्रा में उनके उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी, रिपोर्ताज, काव्यसंग्रह आदि का क्रमबद्ध विवेचन किया गया है। अन्य रचनाकारों व तात्कालिक परिवेश में मणि मधुकर को व्याख्यायित किया गया है।

तृतीय अध्याय का शीर्षक "मणि मधुकर के उपन्यास और मारवाड़ का सामाजिक जीवन" है। इस अध्याय में उनकी औपन्यासिक कृतियों की सामाजिक यथार्थपरक व्याख्या की गई है। आर्थिक विषमताओं से जूझते–पिसते पिछड़े वर्ग, नारी की पराधीनता और उसकी विवशता, प्राकृतिक प्रकोप और पलायन की समस्या, जातीय वैमनस्य, विघटित एवं ह्रास होते सामाजिक एवं मानवीय मूल्यों को उपर्युक्त अध्याय में विस्तृत ढंग से रूपायित किया गया है।

प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध के चतुर्थ अध्याय का शीर्षक "मणि मधुकर के उपन्यास और मारवाड़ का सांस्कृतिक जीवन" है। इस अध्याय में मारवाड़ी समाज के रहन–सहन, खान–पान, लोकविश्वास, अंध परम्पराएँ, रीति–रिवाज और लोकगीतों को क्रमबद्ध तरीके से विश्लेषित किया गया है। मारवाड़ी समाज के लोकजीवन के अन्तःसंबंधों, विविध पक्षों एवं उनकी विशेषताओं, महत्ताओं का विवेचन प्रस्तुत अध्याय में वर्णित किया गया है।

प्रस्तुत शोध–प्रबंध में मैंने मारवाड़ में विद्यमान जनजीवन की समस्याएँ, वहाँ की सभ्यता–संस्कृति, धार्मिक–सामाजिक विडम्बनाओं में झूलते व्यक्ति व समाज के साथ ही राजनीतिक परिदृश्य को विवेचित–विश्लेषित किया है। इसके साथ ही मणि मधुकर के साहित्य की बुनियादी समस्याओं को भी विश्लेषित करना मेरे शोध का मूल प्रयोजन रहा है।

अपने शोध कार्य के सन्दर्भ में मैं शोध निर्देशक डॉ. ओमप्रकाश सिंह का हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने समय–समय पर मेरा उचित मार्गदर्शन किया और इस दुरूह कार्य को सहज व सरल बनाया। उनके द्वारा दिये गये सुझावों व समाधानों ने शोधकार्य में गत्वरता प्रदान की और मुझे प्रोत्साहन मिला। मैं अनुगृहीत हूँ आदरणीय डॉ. हेतु भारद्वाज, डॉ. दुर्गाप्रसाद अग्रवाल और रचना मधुकर (मणि मधुकर की पत्नी) के प्रति जिन्होंने मुझे पर्याप्त शोध सामग्री उपलब्ध करायी। मैं राधाकिशन और कालूराम का कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मुझे उचित मार्गदर्शन दिया, साथ ही छोटे भाई की तरह स्नेह और प्यार भी दिया। शोध सामग्री के संकलन के क्रम में मुझे दिल्ली विश्वविद्यालय के पुस्तकालय, ज.ने.वि. के पुस्तकालय और साहित्य अकादमी का भी सहयोग मिला, इसलिए उनके प्रति मैं अपना आभार व्यक्त करता हूँ। विश्वविद्यालय परिसर के दोस्तों के प्रति मैं हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से मुझे शोध में सहायता प्रदान की।

शोध के सन्दर्भ में मैं अपने माता–पिता की प्रेरणा एवं प्रेम के प्रति कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मुझमें क्षण–क्षण उत्साह का संचार किया। बड़ी दीदी व अनुज राजेश, प्रियंका का प्यार मुझे हमेशा मिला। स्वर्गीय माँ श्रीमती राजकुमारी जी को सादर प्रणाम करता हूँ, जिसके मातृत्व से मैं वंचित रहा। नीरज के प्यार ने भी मुझे शोध के प्रति एकाग्रचित किया।

और अंत में, उस असीम सत्ता के प्रति भी नतमस्तक हूँ जिसने मुझे शोध के काबिल बनाया।

– जितेश सिंह

अध्याय – 1

मारवाड़ का सामाजिक–सांस्कृतिक परिदृश्य

i. मारवाड़ का सामाजिक परिदृश्य
ii. स्त्रियों की स्थिति
iii. लोकोत्सव
iv. धार्मिक अंधविश्वास
v. खान–पान और परिधान
vi. आमोद–प्रमोद के साधन
vii. लोकसंस्कृति, लोकसंगीत और लोकनृत्य

मारवाड़ का सामाजिक–सांस्कृतिक परिदृश्य

कर्नल टॉड ने 'एनाल्स एण्ड एण्टीक्यूटीज ऑफ राजस्थान' (1829 ई.) नामक पुस्तक में राजपूताना के लिए राजस्थान शब्द का उल्लेख किया है। देश के इस भाग में राजपूतों का वर्चस्व रहा है। राजपूतों की सार्वभौमिक सत्ता को महत्त्व देते हुए ही जार्ज थामस ने 1800 ई. में इस भाग के लिए 'राजपूताना' शब्द का प्रयोग किया। 19वीं शताब्दी के पूर्व इस भाग के अलग–अलग प्रदेश अलग–अलग नामों से जाने जाते थे। प्राचीन भारत में गंगानगर के आस–पास के प्रदेश–योद्धेय, बीकानेर के चारों ओर का प्रदेश–जांगल, नागौर के चारों ओर का प्रदेश अहिच्छत्रपुर, जोधपुर–पाली का सीमावर्ती प्रदेश–गुर्जर प्रदेश, बाड़मेर का प्रदेश–श्रीमाल, वर्तमान बाड़मेर–जैसलमेर के आस–पास का प्रदेश–बल्ल और दुंगल, जालौर को स्वर्णगिरी, सिरोही आबू के आस–पास का प्रदेश चन्द्रवती, उदयपुर–चित्तौड़ का क्षेत्र–शिवि, डूंगरपुर और बांसवाड़ा का प्रदेश – व्याघ्रवाट, अलवर का सीमावर्ती प्रदेश कुरु, भरतपुर, करौली और धौलपुर क्षेत्र – शूरसेन, जयपुर–टोंक के चारों ओर का प्रदेश विराट कहलाये। अतः यह स्पष्ट है कि समयानुरूप स्थानों और क्षेत्रों के नाम बदलते रहे हैं। ब्रिटिश काल में 18 राजाओं की रियासते, दो ठिकाने तथा अजमेर–मेरवाड़ा केन्द्र द्वारा शासित प्रदेश थे। इन सभी रियासतों, ठिकानों और केन्द्र शासित प्रदेशों का एकीकरण ही राजस्थान कहलाया। यह एकीकरण एक नवम्बर 1956 ई. को हुआ।

राजस्थान विभिन्न सामाजिक–सांस्कृतिक उप–इकाइयों अथवा लघु प्रदेशों में विभाजित है। इन सामाजिक–सांस्कृतिक इकाइयों अथवा लघु प्रदेशों की सीमाएँ भौतिक लक्षणों के आधार पर तय की गई हैं। इन क्षेत्रों को राज्य में विभिन्न स्थानीय नामों जैसे – मेवात प्रदेश, ढूंढार, शेखावाटी, खेराड एवं मालखेराड़, ऊपरमाल, हाडौती का पठार, छप्पन का मैदान, मेवाड़, बांगड़ क्षेत्र, मोमट, मेरवाड़ा, मारवाड या मरुस्थली गोड़वाडा, अरबूद, गिरवा से पुकारा जाता है।

मारवाड़ प्रदेश का दूसरा नाम मरुस्थल है। इस क्षेत्र के अन्तर्गत जोधपुर, बाड़मेर एवं जैसलमेर आदि के भू–भाग सम्मिलित हैं। यह क्षेत्र पूर्णतः

रेतीला है। मरु प्रदेश के क्षेत्र शुष्क व विशेष उपज जलवायु वाले कम वर्षा, पशुपालन तथा जल की उपलब्धता से प्रभावित हैं।

मारवाड़ का सामाजिक परिदृश्य :

मारवाड़ क्षेत्र के सामाजिक जीवन में वैविध्य है। सामाजिक जीवन के अन्तर्गत लोगों की सामाजिक स्थिति, जीवन अवसर तथा जीवन शैली की विषमता या समरसता को शुमार किया जाता है। मारवाड़ का समाज परम्परागत रूप से हिन्दू बहुल समाज रहा है। वर्तमान में मारवाड़ का समाज हिन्दू–मुसलमानों की सामासिक संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता है। यहाँ का समाज आज भी विभिन्न धर्मों, जातियों तथा उपजातियों में विभक्त है। सामाजिक भेदभाव, जाति–व्यवस्था, वर्ग व्यवस्था, सम्पदा एवं व्यवसाय भेद, सामाजिक अस्पृश्यता, स्त्रियों की स्थिति, दहेज प्रथा, आमोद–प्रमोद, अन्तर्जातीय सम्बन्ध धार्मिक जीवन, अंधविश्वास आदि बिन्दुओं का दृष्टिपटल मारवाड के सामाजिक परिदृश्य को व्याख्यायित करेगा।

वर्तमान समय में वर्णों का स्थान जातियों एवं उपजातियों ने ग्रहण कर लिया है। डॉ. गोपीनाथ शर्मा के अनुसार – "व्यावसायिक समूहों के विकास, अन्तर्जातीय विवाहों, विदेशियों के आगमन आदि के कारण समाज में जटिलताएँ बढ़ गईं जिसके फलस्वरूप अब समाज का ढांचा वर्णों पर अवलम्बित नहीं रहा, बल्कि यह सामाजिक ढाँचा जन्म, वंश, व्यवसाय तथा वर्ग–अधिकारों पर आधारित विभिन्न जातियों तथा उपजातियों पर अवलम्बित हो गया।"[1] आज प्रत्येक व्यक्ति अपनी जाति व समाज की सीमाओं में कैद है। यह जरूर है कि वह समाज व देश के प्रति निष्ठावान है।

मारवाड़ में ऊँच–नीच, पद–प्रतिष्ठा एवं उच्च–निम्न जैसी विशिष्ट प्रवृत्तियों का आधार जाति–व्यवस्था ही रही है। मरु प्रदेश की प्रत्येक जाति अपने परम्परागत नियमों से नियन्त्रित होती है, जिसका दायित्व जाति पंचायतें संभालती हैं। मरु अंचल की जाति–व्यवस्था को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। उच्च वर्ग में शासक तथा शक्ति के निकट रहने वाली जातियाँ सम्मिलित हैं

जैसे राजपूत, ब्राह्मण, कायस्थ आदि। वर्तमान में ब्राह्मणों द्वारा अध्यापन, यजमान वृत्ति, नौकरियाँ, पुरोहितगिरी, पाठ–पूजा आदि कार्य किये जाते हैं। मारवाड़ में राजपूतों का विशिष्ट स्थान है। अन्य वर्गों की भांति राजपूत कुल भी कई उपकुलों व परिवारों में विभाजित हैं जैसे मारवाड़ के राठौड़ कूंपावत, उदावत, चंपावत, जोधावत, पन्तावत, मेडतिया आदि उपकुलों में हैं। मारवाड़ी राजपूतों का वर्तमान में मुख्य कार्य रक्षा व्यवस्था में भाग लेने के साथ–साथ खेती एवं पशुपालन भी है। वाणिज्य–व्यापार और साहूकारी का धंधा वैश्यों का है।

मारवाड़ में चारणों का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। चारण जाति के लोगों का मुख्य कार्य राजपूत नरेशों एवं सामंतों की ख्याति का गुणगान करना, युद्ध के अवसर पर वीर रस के गीतों द्वारा सैनिकों को प्रोत्साहित करना था। डॉ. एल.आर. भल्ला के अनुसार "चारण जाति में ब्राह्मण एवं राजपूत जाति के गुणों का सामंजस्य है।"[2]

मारवाड़ में खेती करने वाली जातियों में जाट, कुनबी, कलबी, कीर, माली, विश्नोई उल्लेखनीय हैं। मरु प्रदेश में मुख्य रूप से जाट एवं राजपूतों की बहुलता है; अन्य जातियों का स्थान यहाँ गौण है। यद्यपि यहाँ पशुपालक जातियाँ गुर्जर, गायरी तथा रैबारी भी हैं, लेकिन उनकी बहुलता, नाममात्र की है। सुनार, छीपा, सिकलीगट, बलाई, पटवा, जडिया, लुहार, कुम्हार, चतारा, लखारा, ठठेरा आदि दस्तकार जातियाँ हैं। सेवक जातियों में तेली, तम्बोली, नाई, पिंजारा, खटीक, कलाल, धोबी, ढोली शामिल हैं। मरु प्रदेश में चमार, भंगी, कसाई, बलाई, भांभी, डामोर, गरासिया जैसी जातियाँ भी पाई जाती हैं।

मारवाड़ में मुस्लिम समाज अल्पसंख्यक है। इनके रीति–रिवाज तथा परम्पराएँ पूर्णतः हिन्दुओं की तरह ही हैं। मुसलमानों में भी आंतरिक जातिवाद कई रूपों में प्रतीत होता है, जैसे – पिंजारा, भड़भूजा, नालबन्द, कूंजरा, जुलाहा, वणगर, लेखारा आदि। मुसलमानों की सामाजिक स्थिति हिन्दू समाज के समकक्ष है।

मारवाड़ में सामाजिक विषमता सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों रूपों में ही समाज द्वारा स्वीकृत है। सामाजिक भेदभाव का चरम रूप छुआछूत के रूप में यहाँ देखने को मिलता है। वर्चस्व की लड़ाई भी दो समान जातियों के बीच

विभेदक रेखा खींच देती है। यहां पर कुछ जातियों को जन्म से ही अछूत मान लिया जाता है। इस संदर्भ में सुखवीर सिंह गहलौत ने लिखा है – "अनुसूचित जातियाँ हिन्दू धर्मावलम्बी होते हुए भी उन्हें हिन्दू धर्म का पालन करने से वंचित रखा गया है।"[3]

जीवनयापन और कार्यपरकता की दृष्टि से समाज का विभाजन वर्ण और जाति के रूप में हुआ है। उसी तरह व्यक्तिगत जीवन में आश्रम व्यवस्था का स्थान है। सांसारिक और पारलौकिक जीवन में योजनाबद्ध तरीके से बिताने हेतु ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास अवस्था का निरूपण किया गया है। राजस्थान में भारतीय परम्परा के अनुसार इन स्तरों से जीवन क्रम के उल्लेख मिलते हैं। मेवाड़ के वापारावल ने आश्रम व्यवस्था के अनुरूप ही जीवन व्यतीत किया था। चित्तौड़, गलता, मंडोर आदि स्थानों में पायी जाने वाली समाधियाँ आश्रम व्यवस्था के ठोस उदाहरण हैं। डॉ. गोपीनाथ शर्मा लिखते हैं "राजस्थान में जो त्याग, बलिदान के उदाहरण पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं, उनका मुख्य कारण यही है कि यहाँ के निवासी कर्त्तव्य और समाज के प्रति निष्ठावान रहे जो आश्रम व्यवस्था के मूल मंत्र थे।"[4] लेकिन समयानुरूप इस व्यवस्था में शिथिलता आने लगी और वर्तमान में इसका अस्तित्व समाप्तप्राय है।

शास्त्रों में वर्णित सोलह संस्कारों का अनुपालन न्यूनाधिक रूप में राजस्थान के सभी वर्णों और जातियों में पाया जाता है। संस्कारों के परिपालन के सम्बन्ध में डॉ. गोपीनाथ शर्मा लिखते हैं "संस्कारों का आरम्भ जन्म से मृत्युपर्यंत अविरल इसलिए नियोजित किया गया है कि मनुष्य अपने दायित्व के प्रति निरन्तर जागरूक रहे। इनकी गतिविधि के साथ यज्ञ, दान और देवगण इस प्रकार संयोजित किये गये हैं कि समाज में आस्था और धर्मपरायणता का उद्‌बोधन होता है।"[5]

राजस्थानी साहित्य में सीमान्तोनयन, नामकरण, अन्नप्राशन, उपनयन, विवाह, अंत्येष्टि आदि संस्कारों का उल्लेख मिलता है। जिस समय बच्चा माँ के गर्भ में होता है उस समय सीमान्तोनयन संस्कार हवन के द्वारा पूर्ण किया जाता है। विवाह संस्कार में गणेश पूजन, मातृका पूजन, हवन, सप्तपदी आदि प्रक्रियाओं का किया जाना आवश्यक है। इस अवसर पर होने वाली रस्में सांस्कृतिक दृष्टि

से अनूठी हैं। टीका, मिलणी, पीठी, बाजोट–बिठावन जैसे रस्में राजस्थान की विशेषताएँ हैं। राजपूतों में टीके की रस्म ब्राह्मण व भाटों द्वारा सम्पन्न कराई जाती है। पीठी तथा बाजोट की रस्म में स्त्रियों की प्रधानता रहती है जिसमें वर–वधू को उबटन लगाया जाता है। यह सत्य है कि राजस्थान में संस्कारों का निर्वाह मंद और गतिहीन अवश्य हो गया है लेकिन अन्य प्रान्तों की तुलना में इनका महत्त्व कुछ हद तक विद्यमान है।

सती प्रथा का राजस्थान की रस्मों में प्रमुख स्थान रहा है। सती प्रथा की रस्म यद्यपि अमानवीय है लेकिन यहाँ के स्त्री समाज में काफी प्रचलित रही है। राजस्थान के प्रसिद्ध राजाओं जैसे प्रताप, मालदेव, बीका, जसवंत सिंह, मुकुन्दसिंह, भीमसिंह, जयसिंह आदि के मरने पर कई रानियाँ, उप–पत्नियाँ, खवासने और दासियाँ सती हुई थीं। राजाओं के प्रमुख कर्मचारियों और उनकी पत्नियों में भी यह प्रथा चल पड़ी थी। महाराजा प्रताप के आश्रित ताराचंद की चार स्त्रियाँ (1591 ई.) उनके साथ सती हुईं। चित्तौड़ के शाको के अवसर पर साधारण परिवार की हजारों महिलाओं ने सती धर्म की पालना की।

सती की भाँति जौहर भी राजस्थान की प्रमुख प्रथा है। जब शत्रुओं के आक्रमण के समय पतियों के युद्ध से पुनः लौटने की आशा नहीं रहती थी, उस समय स्त्रियाँ सामूहिक रूप से अग्नि में भस्म हो जाया करती थीं। जौहर का उद्देश्य धर्म एवं आत्मसम्मान की रक्षा करना था जिससे शत्रुओं के द्वारा बन्दी बनाये जाने की अवस्था में उन्हें अनैतिक एवं अधर्म का आचरण न सहना पड़े। 1301 ई. में रणथम्भौर, 1503 ई., 1535 ई., 1568 ई. में चित्तौड़ में शाके हुए। चित्तौड़ के तीनों शाकों के अवसर पर पद्मिनी, कर्मवती तथा पत्ता व कल्ला की पत्नियों के जौहर जगत् प्रसिद्ध हैं। सच तो यह है कि सती प्रथा और जौहर की प्रथा परिस्थितिवश चल पड़ी प्रथाएँ हैं।

सामाजिक जीवन में स्त्रियों की स्थिति :

समाज की सबसे छोटी संस्था परिवार होती है। सगोत्रता और रक्त सम्बन्धों की घनिष्ठता ही पारिवारिक सम्बन्धों को रूपायित करती है। परिवार के मध्य प्रेम, सहयोग, ऐक्य की भावना नैसर्गिक हैं। परिवार की व्यापकता और

भावनात्मक स्थिति का आधार नारी है। डॉ. गोपीनाथ शर्मा ने नारी की महिमा के बारे में लिखा है "कौटुम्बिक जीवन की सृजनात्मक प्रवृत्ति को जीवित रखने का श्रेय नारी को है। स्नेह, प्रेम, वात्सल्य–भाव, आकर्षण, लालन–पालन, धर्म–संवहन गुरुत्व सेवा आदि गुणों का समावेश स्त्री–स्वभाव में निहित है। अतः धार्मिक एवं सामाजिक व्यवस्था में स्त्रियों का स्थान सर्वदा महत्त्वपूर्ण रहा है। लोक संस्कृति, जिसको जीवन्त संस्कृति कहना चाहिए, स्त्रियों द्वारा ही संचालित एवं परिवर्द्धित होती है।"[6]

राजस्थान के सामाजिक जीवन में स्त्रियों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। नारी की उपस्थिति सभी पर्व और उत्सवों की धुरी है उसे विच्छिन्न नहीं किया जा सकता। राजस्थान में नारी के शौर्य का परीक्षण चित्तौड़, रणथम्भौर और जालौर में हुए शाके से किया जा सकता है। जिस समय पारिवारिक एवं राष्ट्रीय जीवन तहस–नहस हो रहा था, नैतिकता का पूर्णतः पतन हो चुका था। उस समय कर्मवती, पद्मिनी और उनकी लाखों सहेलियों ने जौहर व्रत के द्वारा अपने प्राणों की बाजी लगाकर राष्ट्र के गौरव की मर्यादा को नष्ट होने से बचाया। विपद स्थितियों में राजस्थान की स्त्रियों ने माँग, सिन्दूर, चूड़ी, नूपुर और बिन्दी जैसे शृंगार प्रसाधनों के साथ अपने को अग्नि के सुपुर्द कर दिया। मातृ और धातृ सेवा के लिए पन्नाधाय का नाम आज भी जीवित है। पन्नाधाय ने अपने बच्चे की हत्या करके उदयसिंह की रक्षा की। मीरा भी राजस्थान के स्त्री समाज का आभूषण है।

राजस्थान में स्त्रियों की स्थिति में निरन्तर परिवर्तन हुए हैं। मुगल प्रभाव के फलस्वरूप स्त्री समाज में बाल विवाह व पर्दा प्रथा की शुरुआत हो गई थी। स्त्रियाँ बाल–विवाह, बहुविवाह, सती प्रथा, कन्या वध, तलाक प्रथा आदि अनेक कुरीतियों की शिकार बन गई तथा उनकी दशा दिन–प्रतिदिन बिगड़ती चली गई। राजस्थान में आज भी बाल–विवाह का प्रचलन है। यह समस्या इतनी गम्भीर है कि 2–4 वर्ष के बच्चों को ही उनके माता–पिता अपनी गोद में बैठाकर उनका विवाह सम्पन्न करने लगे हैं।

समाज में बहुविवाह की प्रथा भी प्रचलित थी। राजपूत नरेश तथा सामंत अनेक स्त्रियों से विवाह करते थे। महाराणा प्रताप के 11, संग्रामसिंह द्वितीय के सोलह, अरिसिंह के आठ, रायसिंह के 6 तथा अभयसिंह के बारह

पत्नियाँ थीं। सामन्त तथा धन सम्पन्न व्यक्ति भी अनेक स्त्रियों से विवाह करते थे। बहुविवाह प्रथा के कारण स्त्रियों की दशा सोचनीय बनी हुई थी। इससे पारिवारिक जीवन क्लेशपूर्ण हो जाता था। राजमहलों में गृह–कलह, षड्यन्त्र, परस्पर ईर्ष्या, द्वेष आदि का वातावरण बना रहता था। मारवाड़ के शासक राव मालदेव की मृत्यु के पश्चात् उनकी गद्दी के लिए हुए संघर्ष में 'बहुविवाह' का ही गहरा हाथ था।

राजस्थान में अन्तर्जातीय विवाह भी प्रचलित थे। राजपूत शासकों के हरमों में विभिन्न जातियों की सैकड़ों स्त्रियाँ रहती थीं। इन स्त्रियों को रानियों का दर्जा प्राप्त नहीं होता था। उन्हें ख्वासन, पड़दायतन अथवा रखैल कहा जाता था। मुगलों के आगमन के बाद राजपूत–मुगलों के सम्पर्क में आए। निकट आने पर दोनों जातियों के बीच वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किए। अकबर ने आमेर, बीकानेर तथा जैसलमेर के राजपूत–नरेशों की राजकुमारियों के साथ विवाह किये। जहाँगीर ने आमेर की राजकुमारी मानबाई के साथ विवाह किया। इन विवाहों ने मुगलों तथा राजपूतों के जीवन तथा संस्कृति पर गहरा प्रभाव डाला।

राजस्थान की सामाजिक समस्याओं में विधवा–विवाह की समस्या सबसे अधिक अमानवीय है। राजस्थान के पुरुष इस मिथ्या धारणा के शिकार हैं कि स्त्रियों को स्वर्ग की प्राप्ति हेतु पति की चिता पर चढ़ जाना चाहिए। लेकिन स्वयं पुरुष मनमानी संख्या में विवाह कर लेने का अधिकार ले लेता है। उच्चवंश के राजपूतों में विधवा–विवाह का प्रचलन नहीं है। राजस्थान में विधवाओं की स्थिति अत्यंत सोचनीय थी और आज भी है। उसे अपना समस्त जीवन नीरसता और धार्मिक क्रियाओं के सम्पादन में व्यतीत करना पड़ता है। विधवा स्त्रियाँ न तो अच्छे कपड़े पहन सकती हैं और न ही आभूषण धारण कर सकती हैं। मांगलिक अवसरों पर विधवाओं का मुँह देखना अशुभ माना जाता है। इसी कारण विधवाओं को सार्वजनिक समारोहों में सम्मिलित होना निषिद्ध माना जाता था। बहुविवाह तथा रखैल रखने की सामाजिक–रुचि ने स्त्री–समाज में वेश्यावृत्ति को पनपाया था। राजा और सामंतवर्ग के लोग सुन्दर और सुसंस्कृत वेश्याओं को अपनी रखेल बनाकर रखते थे। ये वेश्याएँ स्वामीभक्त भी होती थी। वेश्याएँ रनिवासों में रहती थीं तथा अपने स्वामी की मृत्यु हो जाने पर सती भी होती थीं। मारवाड़ के अजीत

सिंह की मृत्यु के समय उसकी रखेलें भी सती हो गयीं। राजस्थान के राजपूत राज्यों में वेश्याओं को मासिक वृत्ति तथा भोज्य पदार्थ देने के उदाहरण उपलब्ध हैं। वेश्याओं का कार्य राजकीय समारोहों में नृत्य और गायन से मनोरंजन करना और कराना होता था। सामान्य वेश्याएँ नृत्य, संगीत और यौन–व्यापार से अपना निर्वाह करती थी। कई वेश्याएँ छोटी लड़कियों को खरीदकर अनैतिक धंधा करवाती थी। इस घृणित प्रथा को समाप्त करने के लिए किसी भी राजपूत शासक ने उचित कदम नहीं उठाया। भारत सरकार ने वेश्यावृत्ति उन्मूलन का कानून बनाकर चाहे इसका अन्त कर दिया हो; लेकिन दुर्भाग्यवश वेश्यावृत्ति आज भी किसी न किसी रूप में जारी है। राजस्थान में कन्यावध, स्त्रियों का क्रय–विक्रय, पर्दा प्रथा और डाकण प्रथा भी प्रचलित हैं।

लोकोत्सव

सामाजिक जीवन में लोकोत्सवों का महत्वपूर्ण स्थान है। स्थानीय संस्कृति की स्पष्ट छाप लोकोत्सवों में दिखाई देती है क्योंकि इनके साथ प्राचीन परम्पराएँ प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ी होती हैं। इन परम्पराओं का स्वरूप धार्मिक व सामाजिक होता है। इन उत्सवों, पर्वों, ऋतुओं एवं विशेष अवसरों पर जन–भावना को देखा जा सकता है। राजस्थान में प्राकृतिक वातावरण में विभिन्नता होने से लोकोत्सवों का भी एक विचित्र स्वरूप देखा जा सकता है। मरु अंचल में त्योहारों के अपने गीत हैं जिनके प्रति जनसमाज की गहरी भावनात्मक आस्था पाई जाती है और लोग एकता के सूत्र में बंधे रहते हैं। त्योहारों में यहाँ हिन्दू–मुसलमान, ईसाई आदि सभी धर्मों के उत्सव मनाये जाते हैं।

मारवाड़ के सभी त्योहारो में गणगौर का सामाजिक और धार्मिक दृष्टि से महत्त्व है। सधवा स्त्रियाँ एवं कुमारियाँ इस पर्व को असीम निष्ठापूर्ण भाव से मनाती हैं। इस पर्व पर स्त्रियाँ पति की दीर्घायु, सुहाग की चिरकालीनता, कुमारिकाओं को अच्छे वर प्राप्ति हेतु ईश्वर से कामना की जाती है।यह त्योहार एक व्रत का भी अंग माना जाता है। स्त्रियाँ 15 दिन तक व्रती रहकर शिव–पार्वती का पूजन करती हैं। कुमारियाँ बाग–बगीचों से फूलों को कलश में सजाकर गीत गाती हुई अपने घर ले जाती हैं। गणगौर पर होली की राख के पिण्ड भी बनाये

जाते हैं और यव के अंकुरों के साथ इनका पूजन होता है। इस अवसर पर चूड़ा और चूंदड़ी की अक्षयता की कामना की जाती है और उसी के उपलक्ष में विविध नृत्यों का आयोजन और गीतों का गायन किया जाता है।

तीज का त्यौहार ऋतुप्रधान है। हरियाली के वातावरण में इसको मनाया जाता है। डॉ. गोपीनाथ शर्मा मारवाड़ में हरियाली तीज के सांस्कृतिक महत्त्व को बताते हुए लिखते हैं – "राजस्थान में जहाँ वर्षा कम होती है, वहाँ इस उत्सव को अधिक उल्लास से मनाया जाता है, क्योंकि शुष्क भूमि में थोड़ी भी आभा हृदयाकर्षक लगती है।[7] इस त्योहार पर नवविवाहिताएँ स्थान–स्थान पर झूले डालती हैं। प्रेमिकाएँ अपने प्रेमियों को देखकर शृंगार प्रधान गीतों को गाती हैं और नृत्य भी करती हैं।

मारवाड़ में तीज के अवसर पर यह गीत प्रचलन में है :

"आई आई सामणिया री तीज गौरी ओ
रमवा नीसर्‌या जी म्हारा राज।"[8]

वैसे तो दशहरा को भारत के अन्य भागों में भी मनाया जाता है। परन्तु राजस्थान में यह त्योहार शौर्य का प्रतीक है। मारवाड़ में इसे क्षत्रियों का त्योहार कहा जाता है। मारवाड़ के राजपूत इस त्योहार को शक्ति की पूजा करते हुए शक्ति का प्रदर्शन भी करते हैं। डॉ. गोपीनाथ शर्मा लिखते हैं – "सूअर का शिकार, भैंसों की दौड़, बलिदान, शस्त्र पूजन, हवन, खेजड़ी पूजन, भेंट समर्थक, टीका–दौड़ आदि कार्यक्रमों का विधिवत आयोजन शक्ति–प्रदर्शन के प्रतीक हैं जो राजस्थानी संस्कृति के विशिष्ट अंग हैं।"[9] मारवाड़ में अन्य कई उत्सव जैसे दीपावली, होली, रक्षाबन्धन, जन्माष्टमी, गणेश चतुर्थी, शरद पूर्णिमा, बसंत पंचमी, नागपंचमी आदि बड़े ही धूमधाम से मनाये जाते हैं। इन सभी पर्वों पर मारवाड़ के लोकजीवन की समरसता परिलक्षित होती है।

धार्मिक दृष्टि से राजस्थान एक सांस्कृतिक इकाई है। धार्मिक दृष्टि कहें या धर्म ही राजस्थानी समाज को संगठित किये हुए है; लेकिन उनमें पारस्परिक वैमनस्य का अभाव है। चाहे शैव हों या शाक्त, जैन हो या बौद्ध, ईसाई हो या मुसलमान सभी अपने प्रदेश के प्रति निष्ठावान हैं। अपने धर्मानुपालन के

कारण सुख और शान्ति अनुभव करते हैं। विभिन्न धर्मावलम्बियों के मध्य सहिष्णुता व सौहार्द्रता महसूस की जा सकती है। आधुनिक काल में दादू, रैदास जैसे सन्तों ने धार्मिक जागरण और सांस्कृतिक समन्वय का शंखनाद किया। गोगाजी, तेजाजी, पाबूजी, देवनारायण, जम्मोजी जैसे धर्म सुधारकों की पूजा आज राजस्थान में लोकदेवता के रूप में की जाती है। लोकदेवताओं ने भी विभिन्न जातियों में सामाजिक और सांस्कृतिक एकता स्थापित करने पर बल दिया। सच तो यह है कि राजस्थान की भूमि में आत्मसात करने की क्षमता बेमिसाल है। यही कारण है कि यहाँ विभिन्न धर्म और सम्प्रदाय फले–फूले। यहाँ की संस्कृति में एकता में अनेकता व अनेकता में एकता के भाव धार्मिक दृष्टि से भी दृष्टिगत होते हैं।

धार्मिक अंधविश्वास

मारवाड़ी समाज धार्मिक एवं सामाजिक अंधविश्वासों की गिरफ्त में फंसा हुआ समाज है। यहाँ के लोगों का विश्वास जोगियों के चमत्कार में, ज्योतिषियों की भविष्यवाणी में, तन्त्र–मंत्र, शकुनों और स्वप्नों में, जादू–टोना, डाकण आदि में काफी है। स्त्रियाँ पुरुषों की अपेक्षा अधिक अंधविश्वासी हैं। चन्द्रग्रहण के समय दान देना, पूर्वजों की आत्मा को बुलाने हेतु 'रात्रिजग्गा' देने की प्रथा है। शुभ–अशुभ शकुन देखकर कार्य करने की प्रथा प्रचलित है। बच्चों की बीमारियों का इलाज आज भी झाड़–फूंक एवं जादू–टोना से करवाया जाता है।

शुभ मुहूर्त्त देखकर व्यवसाय का उद्घाटन, गृह–प्रवेश, बुधवार को यात्रा प्रारम्भ नहीं करना, छींक आने पर कहीं भी यात्रा न करना, बिल्ली के रास्ता काट जाने पर आगे नहीं बढ़ना, गण के अनुरूप शादी–विवाह तय करना, मरु अंचल के सामाजिक जीवन में आज भी प्रचलित हैं। प्रातः कार्य करने से पूर्व कुलदेवी–देवताओं की पूजा–आराधना करना समाज में प्रचलित अंधविश्वासों की पुष्टि करते हैं।

विज्ञान के युग में भी मरु प्रदेश के लोग कई बीमारियों का इलाज जंतर–मंतर का आश्रय लेकर करवाते हैं। मंत्रों के उच्चारण से या मंत्रों को कागज के टुकड़े पर लिखकर ताबीज के रूप में हाथ या गले में बांधा जाता है।

सांप, बिच्छू आदि के काटने पर मंत्रों का सहारा लेकर उनके जहर को उतारा जाता है। आज भी राजस्थान के ग्रामीण लोग यह विश्वास करते हैं कि झाड़–फूंक करवाने से किसी भी बीमारी का इलाज सम्भव है।

जादू–टोना, भूत–प्रेत तथा माया जाल आदि का प्रभाव भी प्रचलन में है। मारवाड़ के लोग गोगाजी, रामदेवजी, तेजाजी, भैरूजी की पूजा कर जादू–टोना की प्रक्रिया को अपनाते हैं। सन्तान प्राप्ति हेतु औरतें भैरूजी को मानती हैं। औरतें मन्दिर के पास के खेजड़ी के पेड़ के ऊपर अपना नित्यकाम आने वाला वस्त्र छोड़ देती हैं। मनौती पूरी होने पर बलि देने की भी प्रथा है। भोपा को भूत–प्रेत, चुड़ैल आदि को भगाने में सिद्धहस्त माना जाता है।

खान–पान और परिधान

किसी भी देश या क्षेत्र के निवासियों का रहन–सहन, खान–पान, परिधान तत्क्षेत्रीय जलवायु तथा परम्परा से प्रभावित होता है। इसके साथ–साथ विभिन्न वर्गों में भी रहन–सहन, खान–पान, वेशभूषा में वैविध्य रहता है।

मारवाड़ में शाकाहारी एवं मांसाहारी दोनों प्रकार के भोजन का प्रचलन है। कुलीन वर्ग के खान–पान में कुलीनता की गंध अवश्य मिलती है। उनकी तीसों दिन ही दीवाली होती है। विवाह एवं अन्य उत्सवों पर रोटी, पूड़ी, घेवर, लड्डू, मठरी, खाजा, हलुआ, लापसी, खिचड़ी जैसे व्यंजन तैयार होते हैं। मध्यवर्ग में गेहूँ, जौ, गूंजी, चावल खाये जाते हैं। दूध, दही, शक्कर, तेल, घी और गुड़ आदि का प्रयोग होता है। निम्न वर्ग और कृषक वर्ग के लोग प्रायः बाजरा, मक्का, ज्वार, कागणी, माल, कोदरा, सामा, दूध, दही आदि खाद्यान्नों का उपयोग करते हैं। गुड़ तथा इससे बने पदार्थ त्योहार आदि पर काम में लेते हैं। मांसाहारी पकवानों का उपयोग सामान्यतः क्षत्रिय (राजपूत) करते हैं, लेकिन इनके अतिरिक्त निम्न वर्ग के लोग भी मांस का प्रयोग करते हैं। व्यसन के रूप में अफीम, अफीम का गालमा या कसूबां पिया जाता है।

मारवाड़ी समाज में भोजन की विधि में अत्यंत पवित्रता, शुद्धता और संयम का बड़ा महत्त्व रहा है। भोजन से पूर्व स्नान करना, अथवा हाथ, मुँह, पैर धोना आवश्यक है।

परिधान जीवन–क्रम का एक अंग है। परिधान की विविधता राजस्थान की तत्कालीन परिस्थितियों तथा यहाँ की मनोवैज्ञानिक स्थिति का परिचायक है। डॉ. गोपीनाथ शर्मा लिखते हैं – "राजस्थान की वेशभूषा का सांस्कृतिक पक्ष इतना प्रबल है कि सदियों के गुजर जाने पर और विदेशी प्रभाव होते रहने पर भी यहाँ की वेशभूषा अपनी विशेषताओं को स्थिर रखने में सफल रही है।"[10] मारवाड़ की वेशभूषा तत्क्षेत्रीय जलवायु तथा उपलब्ध पदार्थों से संबंधित होती है।

मरु प्रदेश में रहने वाले पुरुष सिर पर गोलाकार पगड़ी बांधते हैं जिसका पल्ला नीचे की ओर लटका होता है। ये लोग कई शैलियों में पगड़ियाँ बांधते हैं जिनमें अटपटी, अमरशाही उदेशाही, खंजरशाही, शिवशाही, विजयशाही और शाहजहानी प्रमुख हैं। सुनार आंटे वाली पगड़ी बांधते हैं तो बनजारे मोटी पट्टेदार पगड़ी। मोठडे की पगड़ी विवाहोत्सव पर, लहरिया की पगड़ी सावन में, दशहरे के अवसर पर मदील तथा फूलपत्ती की छपाई वाली पगड़ी होली पर पहनी जाती है। पगड़ी राजस्थान में गौरव तथा मान प्रतिष्ठा से जुड़ी हुई है। अपने गौरव की रक्षा के लिए आज भी राजस्थान में यह कहावत प्रचलित है कि "पगड़ी की लाज रखना।" इसी तरह पगड़ी को उतार फेंक देना यहाँ अपमान का सूचक माना जाता है। डॉ. गोपीनाथ शर्मा लिखते हैं – "राजस्थान में इसका प्रयोग न केवल धूपताप से सिर की रक्षा के लिए है वरन् व्यक्ति की सामाजिक स्थिति और धार्मिक भावना को व्यक्त करने के लिए भी है।"[11]

पगड़ी की भाँति 'अंगरखी' भी मारवाड़ के लोग पहनते हैं। वर्तमान समय में अंगरखी को विविध रंगों तथा आकारों में बनाया जाता है जैसे तनसुख, दुतई, गाबा, गदर, मिरजाई, डोढ़ी, कानो, उगला आदि। उच्च वर्ग के लोग जामा, खिड़कियाँ पाग, अंगरखी, चूड़ीदार पायजामा, कमरबन्द तथा कटार या तलवार के साथ सुसज्जित होते हैं।

लम्बाई की दृष्टि से अंगरखी दो प्रकार की होती है – एक तो कमरी अंगरखी जो कमर तक लम्बी होती है और दूसरी घुटने तक या उससे भी नीची। रूईदार अंगरखी सर्दियों में पहनी जाती है। उच्च वर्ग या समृद्ध लोग अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार रेशम या कलाबत्तू से कढ़ाई करवा करके अंगरखी

बनवाते हैं। सम्पन्न वर्ग अंगरखी के ऊपर एक चोगा पहनते हैं जो प्रायः रेशमी, ऊनी या किमखान से बना होता है।

ग्रामीण लोग कम्बल या पछवड़े को खेतों में काम करते समय इस प्रकार ओढ़ते हैं कि कम्बल हाथों का बन्धन न बन जाए। सिर पर ओढ़े जाने वाले कम्बल को 'घूघी' कहते हैं। मारवाड़ में रंगीन सूती कपड़ों की मिली हुई घूघी बच्चों के लिए अधिक प्रचलन में लाई जाती है। पुरुष परिधानों में पायजामा तथा धोती का उपयोग भी होता है। अंगरखी के नीचे धोती घुटनों तक बंधी होती है या फिर धोतियाँ घुटनों के नीचे दो या तीन लांग की होती हैं।

स्त्री परिधानों में साड़ी, ओढ़नी, लहँगा, कंचुकी या चोली का प्रचलन है। इन सभी परिधानों पर गोटा किनारी, सलमे, सुनहरी व रुपहरी की छपाई होती है। मारवाड़ की स्त्रियाँ शरीर के ऊपरी हिस्से में कुर्ती एवं काचली पहनती हैं। मारवाड़ में एक प्रथा प्रचलित है कि कुँवारी लड़कियाँ कुर्ती–कांचली एक ही परिधान रूप में पहनती हैं। शादी के बाद इसे अलग–अलग पहना जाता है। शरीर के अधोभाग में घाघरा, ऊपर कुर्ती कांचली पहनने के बाद स्त्रियाँ ओढ़नी ओढ़ती हैं। दैनिक उपयोग के लिए सूती मलमल की ओढ़नी को रंगवा या छपवा कर साधारण किनारी या गोटा लगवा लिया जाता है, जबकि विशेष अवसरों हेतु ओढ़नियाँ विविध रंगों से रंगी व अलंकृत की गई उपयोग में लाई जाती हैं।

सावन में तीज के त्योहार पर मारवाड़ की स्त्रियाँ लहरिया पहनती हैं। लहरियों में पाँच रंग का लहरिया शुभ माना जाता है। कुछ जातियों की स्त्रियाँ चूड़ीदार पजामा पर 'तिलका' नामक एक चोगा सा पहनती हैं और ऊपर से ओढ़नी ओढ़ लेती हैं।

मारवाड़ में स्त्रियाँ व पुरुष दोनों को ही आभूषण पहनने का शौक है। कानों में मुरकियां, लोंग, झाले, छैलकड़ी, हाथों में बाजूबन्द, गले में बलेण्डा, हाथ में कड़ा तथा अँगुलियों में अंगूठी आदि पुरुषों के आभूषण प्रमुख हैं। स्त्रियाँ बोर पहनती हैं जो सुहाग का चिह्न माना जाता है। कलाई पर भी सोने व हीरों की चूड़ियां पहनी जाती हैं। कलाई में एक विचित्र प्रकार का कड़ा पहना जाता है जो गोखरू नाम से प्रसिद्ध है। गोखरू के पास ही पुन्छि पहना जाता है। स्त्रियाँ हाथी दांत अथवा लाख का चूड़ा पहनती हैं जो सुहाग का प्रतीक है। इस तरह का

चूड़ा या हाथी दांत की चूड़िया देश के अन्य भागों में नहीं पहनी जाती। कुछ स्त्रियाँ अमर सुहाग हेतु कुहनी के ऊपर बाजू पर चूड़ा पहनती हैं। आभूषणों में बंगड़ी, हथफूल, बोरला, रखड़ी, मरहठी, गोखरू, सिरफूल, पीपल पत्ते, बाजूबन्द करचुरी, तिमन्या, पंचमण्या आदि प्रमुख हैं।

आमोद–प्रमोद के साधन

मारवाड़ के निवासियों का जीवन आमोद–प्रमोद से परिपूर्ण है। अन्तर्कक्षीय खेलों में चौपड़, शतरंज, नारछाली, चरमर जुआ को शुमार किया जाता है। पतंगबाजी, मुक्केबाजी, कुश्तियाँ, रथदौड़, तैरना, शिकार खेलना, पशुओं की लड़ाइयाँ आदि खेलों में बड़ी रुचि ली जाती है। पक्षियों में तोता, मैना, मोर, मुर्गा, कबूतर, चकोर आदि पाले जाते हैं और उन्हें खेल–खिलाकर आनन्दित होते हैं। रासलीला, रामलीला तथा नाटक भी आमोद–प्रमोद की दृष्टि से किये जाते हैं। इस अंचल में तरह–तरह के नृत्य भी होते हैं जिनमें घूमर, फूंदी, होरा आदि प्रमुख हैं। जादूगर, सपेरे, नट तथा बहुरूपिये आदि जगह–जगह खेल दिखाकर लोगों का मनोरंजन करते हैं। चौपड़–चौसर आदि कपड़े के बने बिसात पर खेला जाता रहा है जिसे पति–पत्नी या कोई चार या दो व्यक्ति खेलते हैं। इसमें पासों से या कौड़ियों को फेंक कर गोटियों को पीटा जाता है और इसी से हार–जीत का निर्णय होता है। कई खेलों का संबंध धार्मिक पर्वों और उत्सवों के साथ इतना जुड़ा है कि समाज में एक–पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक निरन्तर उनका प्रचलन एक धरोहर के रूप में जुड़ा रहता है। मारवाड़ के ग्रामीण खेलों में झूलना, गेंद फेंकना, या मारना, काठ की गुड़िया से खेलना आदि प्रमुख हैं। ये खेल मुख्यतः मनोरंजन के साधन हैं, परन्तु इनके द्वारा प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति को आपस में मिलने–जुलने का अवसर मिलता है। खेल–कूद में जात–पाँत का भेदभाव नहीं रहता जो समाज में सामंजस्य एवं सद्भाव उत्पन्न करने का अच्छा अवसर प्रदान करता है।

लोक संस्कृति

लोक संगीत, नाटक, ख्याल, नृत्य आदि विधाओं में लोकजीवन, मनोरंजन और संस्कृति का अद्वितीय रूप निहारने को मिलता है। ये विधाएँ शास्त्र एवं प्रणेता से परे हैं अर्थात् इन विधाओं के लिए न तो शास्त्र ही रचे गये हैं और न इनका

प्रणेता कोई ऋषि–मुनि है। इन कलाओं को एक पीढ़ी दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करती है। परम्परागत अभ्यास ने भी इन कलाओं को जीवित रखने में अपनी महती भूमिका निभाई है। सामाजिक एवं धार्मिक उत्सवों के अवसर गीत तथा नृत्य ही मनोरंजन के साधन होते हैं। राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा में लोकनाट्य, लोकगीत व लोकनृत्य का महत्त्वपूर्ण स्थान है। लोकनाट्य की परम्परा को हम ख्याल, स्वांग और लीला के रूप में प्रचलित पाते हैं।

रामलीला व रासलीला विशेष रूप से मारवाड़, मेवाड़, मत्स्य क्षेत्र में लोकप्रिय है। रामायण और भागवत पर आधारित कथाओं के साथ लोकजीवन को इस तरह प्रदर्शित किया जाता है कि राम व सीता अथवा कृष्ण और राधा एक साधारण व्यक्ति के रूप में आते हैं। उनकी पोशाकें भी लोक परिपाटी के अनुकूल होती है। इन लीलाओं में धर्म, नैतिकता, मनोरंजन और लोकजीवन का सच्चा स्वरूप प्रकट होता है।

मारवाड़ के लोकनाट्यों में 'रम्मत' प्रमुख है। रम्मत का अभिप्राय खेल है। ऐतिहासिक एवं पौराणिक तथ्यों पर आधारित काव्य रचनाओं को अभिनीत करना रम्मत कहलाता है। रम्मत बीकानेर, जैसलमेर, पोकरण और फलौदी क्षेत्र में होती रही है। रम्मत में संभागी सभी जाति के लोग होते हैं। प्रारम्भ से ही सभी पात्र रंगमंच पर बैठे मिलते हैं और अपना करतब दिखाकर स्थान ग्रहण करते हैं। इसमें टेरियो और गायकों की प्रमुखता रहती है। साहित्यिकता रम्मतों की मुख्य विशेषता है। रम्मतों के गीत चौमासा, लावणी (भक्ति और शृंगार विषयक) गणपति वंदना तथा व्यक्ति–विशेष से सम्बन्धित रहते हैं। कवि तेज की मूमल म्हदरे का खेल, छेले तम्बोलन का खेल, नैना खसम को खेल, भर्तृहरि का ख्याल आदि रम्मते प्रसिद्ध हैं।

राजस्थान में अपनी क्षेत्रीय रंगत को बिखरने में ख्याल बड़े ही लोकप्रिय रहे हैं। 'ख्यालों' का संबंध वीरों की कहानियों से होता है। इनका प्रधान रस वीर होता है, जबकि अन्य रस गौण होते हैं। ये ख्याल कभी–कभी धार्मिक कथानकों को गायन, वादन और संवाद से सम्मिश्रित कर इनकी उपयोगिता को बढ़ा देते हैं। अमरसिंह रो ख्याल, रूठी राणी रो ख्याल, पद्मिनी रो ख्याल, पार्वती रो ख्याल आदि भिन्न–भिन्न रंगत प्रस्तुत करने के बावजूद सांस्कृतिक एकरूपता लिये हुए हैं।

गवरी मेवाड और मारवाड़ के भीलों की सामुदायिक गीतिनाट्य शैली है। भील जाति के लोग चालीस दिन तक गवरी उत्सव उदयपुर के आसपास के क्षेत्रों में आयोजित करते हैं। इस नाट्य में स्त्रियों का काम पुरुष ही करते हैं। इस नृत्य का नायक वृद्ध पुरुष होता है जो शिव का अवतार समझा जाता है। इस नृत्य–नाट्य के प्रमुख प्रसंग वणजारा, भियावंड़, नट–नटी, खेतूड़ी, बादशाह की सवारी, खेडालिया भूत आदि हैं। गवरी के कथानक युद्ध, हार, मृत्यु और आखिर में जीवात्मा के वापिस जी उठने से सम्बद्ध होते हैं। देवी की कृपा से वापिस जीवित होना दिखाया जाता है।

लोकनाट्य के अतिरिक्त लोकवाद्य राजस्थानी सभ्यता एवं संस्कृति का प्रमुख अंग है। राजस्थान में लोकसंगीत को किसी न किसी लोकवाद्य के साथ सम्बद्ध करके देखा जाता है। लोकदेवता एवं लोक देवियों के साथ भी वाद्य विशिष्ट रूप से प्रयुक्त हो रहे हैं। पाबूजी की कथा के साथ रावण हत्था, बगड़ावत के साथ गलालगे और अनेक बड़ी गेय कथाओं के साथ तन्दूरा व मजीरा जुड़े हुए हैं। केलादेवी के मेले में नगाड़े, तासे और तीनतारा हैं जो सारंगी की तरह बजाया जाता है। भोगिया सारंगी और पूँगी नामक वाद्य मत्स्य, शेखावाटी और मारवाड़ अंचल में बजाया जाता है। भपंग एक प्रकार का लय वाद्य है जो तूँबे पर चमड़ा मढ़ कर एक तार के तनाव से बजता है। इन विधाओं के विकास में भक्ति, प्रेम, उल्लास और मनोरंजन की उर्वरक भूमि का प्रमुख स्थान रहा है।

लोकसंगीत और लोकनृत्य

लोकसंगीत का संबंध मानवीय उद्‌गारों के प्रस्फुटन से है। महात्मा गाँधी के शब्दों में "लोकगीत ही जनता की भाषा है ... लोकगीत हमारी संस्कृति के पहरेदार हैं।"[12] लोकसंस्कृति या लोकगीत सामूहिक रूप में विभिन्न अवसरों पर गाया जाता है। मारवाड़ के निवासियों के रहन–सहन, रीति–रिवाज, वेशभूषा, खान–पान, देवी–देवता, पर्व–उत्सव आदि गीतों में अभिव्यंजित होकर यहाँ की संस्कृति को साकार करते हैं। मारवाड़ के लोकगीतों में सर्वाधिक संख्या संस्कारों, त्योहारों व पर्वों के अवसर पर परिवार की स्त्रियों द्वारा गाये जाने वाले गीतों की है। गणगौर व तीज राजस्थान के विशेष पर्व हैं और ये त्योहार क्षत्रियों में

अत्यधिक उत्साह से मनाये जाते हैं। गणगौर का सबसे प्रसिद्ध गीत इस प्रकार है :

"खेलण दो गणगौर भँवर म्हानें खेलण दो गणगौर
म्हारी सखियाँ जोवे बाट हो भँवर म्हाणे खेलन दो गणगौर।"[13]

गणगौर व तीज के समय का घूमर नृत्य मारवाड़ की अपनी पहचान है। रंग बिरंगे लहरियों से सुसज्जित स्त्रियों का घूमर नृत्य अपने आप में अद्वितीय है :

म्हारी घूमर छे नखराली ए मा गोरी घूमर रमवा म्हे जास्यां[14]

मारवाड़ में ऋतु गीतों का प्रचलन भी है। शुष्क मरुधरा में वर्षा और बसन्त ऋतु के गीत बहुप्रचलित हैं जैसे :

"सावण आयो ए म्हारा सोगतिया सरदार,
भँवर म्हानै पीवर मेलो ए।"[15]

मरु प्रदेश में लोकदेवता, लोकदेवियों, कुलदेवता एवं कुलदेवियों की पूजा अत्यंत श्रद्धा भाव से की जाती है और इनके भजन बहुत प्रचलित हैं। यह भजन तेजाजी की वीरता और वचनवद्धता को दर्शाता है –

"धरती में दोई फुलड़ा बड़ा जी, एक धरती दूजो मेह,
वा बरसे पा नीपजे जी, दोन्यां रो अविचल राज,
ओ नागण रा तेजाजी थे बड़ा।"[16]

मारवाड़ अंचल में बालुका होने के कारण गीत विशिष्ट प्रभाव उत्पन्न करते हैं। उन्मुक्त क्षेत्र के कारण यहाँ के लोकगीत ऊँचे स्वरों एवं लम्बी धुनों वाले होते हैं। कुरजाँ, पीपली, रतन राणो, भूमल, घूघरी, केवड़ा आदि लोकगीत प्रमुख हैं। राजस्थान की माँड गायकी में मारवाड़ का विशिष्ट स्थान है। जोधपुर, जैसलमेर व बीकानेर की माँड प्रसिद्ध है – जैसे

"जोधपुरी माँड – ताल धीमा दादरा
सेणारी वाडी में साडनो करे छे निवास।
छड़ो न तो कीटा अंग मुडियो रे टूटी मारा कसणारी कोर।

दोहा – जाए दासी बाग में सुण सजण री बात।
घडियल म्हेल पधारजो मदमाता सिरदार।
बीकानेरी माँड – ताल दीपचंडी
प्यारा लागो जी गढ़ बीकाणा रा बालमा।
म्हाने प्यारा लागो जी राज।
दोहा – मारू थारा देश रा में कोई करां करवाण।
ऊँचा टीबा रेत रा, बाजरिया रो खाण।।
जैसलमेरी माँड – ताल धीमा दादरा
ओलुड़ी लणाय सीढ चालयां ओ भँवर म्हाने ओलुडी लगाय
दोहा – कागद लिखूँ साहेबा धण दूजी मत जाण।
वेग पधारो साहिबा, थाने बाबोसा की आण।"[17]

मारवाड़ में प्रचलित नृत्य 'डाण्डिया' है। 'डाण्डिया' नृत्य के अन्तर्गत लगभग 20–25 पुरुषों की एक टोली दोनों हाथों में लम्बी छड़ियाँ धारण करके वृत्ताकार नृत्य करती हैं। यह नृत्य होली के बाद प्रारम्भ होता है। शहनाई, नगाड़े वाले तथा गवैये चौक के मध्य बैठते हैं। पुरुष वर्ग 'लोकख्याल' का लय में गीत गाते हैं। नर्तक लय के अनुरूप ही डांडिया टकराते हुए वृत्त में आगे बढ़ते जाते हैं। इन नृत्यों के साथ गायक नृत्योपयोगी होली गीत गाते रहते हैं। मारवाड़ में मांगलिक अवसरों, पर्वों आदि पर महिलाओं द्वारा घूमर, कालबेलिया नृत्य भी किया जाता है।

भारत में ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व में राजस्थान प्रदेश की ख्याति सामाजिक–सांस्कृतिक एकता और आदर्श के कारण है। राजस्थान विदेशी आक्रमणों और साम्राज्यवादी शिकंजों के केन्द्र में रहा है। इन सबके बावजूद राजस्थान की संस्कृति एकसूत्रता का परिचायक है। इस एकसूत्रता का आधार यहाँ के आचार–विचार, कला, साहित्य, सामाजिक रस्म–रिवाज, उत्सव–मेले, पवित्र नगर, झीलें, नदियाँ, तीर्थस्थल हैं। उपर्युक्त इकाइयाँ ही सांस्कृतिक संयोजन को रूपायित करती हैं।

सन्दर्भ सूची

1. राजस्थानी समाज, कला व संस्कृति, पृ. 316
2. वही, पृ. 322
3. वही, पृ. 353
4. राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास, पृ. 58
5. वही, पृ. 58
6. वही, पृ. 73
7. वही, पृ. 65
8. राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा, पृ. 120
9. राजस्थान का सांस्कृति इतिहास, पृ. 66
10. वही, पृ. 78
11. वही, पृ. 80
12. राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा, पृ. 118
13. वही, पृ. 120
14. वही, पृ. 120
15. वही, पृ. 120
16. वही, पृ. 121
17. वही, पृ. 123

अध्याय – 2

मणि मधुकर की साहित्यिक यात्रा

i. जीवन–परिचय
ii. काव्य–यात्रा
iii. कहानी संसार
iv. नाटक एवं एकांकी साहित्य
v. उपन्यास साहित्य
vi. मणि मधुकर पर परिवेशगत प्रभाव
vii. मणि मधुकर पर अन्य रचनाकारों का प्रभाव
viii. मणि मधुकर और आंचलिकता

मणि मधुकर की साहित्यिक यात्रा

राजस्थान की साहित्य परम्परा में ऐसे बहुत कम लेखक हैं जो प्रान्त के बाहर भी अपनी पहचान बना पाये हैं। स्वातन्त्र्योत्तर साहित्य जगत् में रांगेय राघव, पानू खोलिया, हेतु भारद्वाज, आलमशाह खान, अशोक शुक्ल, रमेश उपाध्याय, स्वयंप्रकाश और मणि मधुकर को सम्माननीय स्थान प्राप्त है। बहुमुखी प्रतिभा के उद्घोषक मणि मधुकर ने सभी विधाओं पर कलम चलाई है। उनके लेखन का सरोकार कहानी, कविता, नाटक, उपन्यास, रिपोर्ताज, एकांकी आदि विधाओं से रहा है। इसी कारण उन्हें 'कलम के घोड़े पर सवार एक बहुरूपी साहित्यकार' की संज्ञा दी जाती है। डॉ. आलमशाह खान अपने मित्र मणि मधुकर के बारे में लिखते हैं – सब कुछ होकर भी, वह नहीं कुछ है – वह है मात्र एक निपट आदमी–संवेदनशील आदमी, जो मन से कवि, मस्तिष्क से कथाकार और व्यवहार से नाटककार। उसका कवि जब कथाकार से, कथाकार जब नाटककार से और नाटककार जब उसके यायावर से जा टकराता है तो रिपोर्ताज, यात्रा–संस्मरण और दूसरा भी सब कुछ सामने आता है – और अब यह सब कुछ एक दायरे में सिमट जाते हैं तो फिर एक आदमी सामने आ खड़ा होता है – मणि मधुकर।"[1]

जीवन–परिचय

मणि मधुकर का जन्म 9 सितम्बर, 1942 ई. को चूरू जिले के राजगढ़ तहसील के सेऊवा गाँव में हुआ था। इन्होंने अपनी प्राथमिक शिक्षा राजगढ़ एवं चूरू में प्राप्त की थी। अग्रवाल कॉलेज से उन्होंने स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। मणि मधुकर ने 1965 ई. में राजस्थान विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर (हिन्दी साहित्य) की परीक्षा प्रथम स्थान के साथ उत्तीर्ण की थी। उन्होंने व्यवसाय के रूप में स्वतन्त्र लेखन को ही अपनाया। इसके अतिरिक्त ये दिल्ली में नेशनल प्रेस ऑफ इण्डिया के कार्यकारी अध्यक्ष भी रहे और संगीत नाटक अकादमी में भी कार्य रत रहे। लेखन के अतिरिक्त मणि मधुकर को शास्त्रीय संगीत एवं चित्रकारी में भी रुचि थी। यायावरी प्रवृत्ति उनके व्यक्तित्व का प्रमुख गुण था। वे निरन्तर

परिस्थितियों से पलायन करते रहे हैं। उनके उपन्यासों में भी यह पलायनवादी दृष्टि नजर आती है।

सन् 1980 ई. में भारतीय सांस्कृतिक सम्बद्ध परिषद द्वारा मणि मधुकर को भारतीय प्रतिनिधि कवि के रूप में 'विश्व कविता समारोह' में भाग लेने के लिए यूगोस्लाविया भेजा गया। इसी वर्ष उन्होंने विश्व की बहुचर्चित रंगशालाओं के अध्ययन के लिए विदेश की यात्रा की। 1981 ई. में मास्को में वाप एजेन्सी एवं नेशनल प्रेस इण्डिया के गठबन्धन हेतु मधुकर ने मास्को की यात्रा की। 1990 ई में U.SS.R. के कवियों की सांस्कृतिक संस्था एवं लेनिनग्राद की सांस्कृतिक संस्था ने मणि मधुकर को आमन्त्रित किया। इसी बीच उन्होंने लंदन, इटली, आस्ट्रिया, ग्रीस, बुल्गारिया का भी भ्रमण किया। 6 दिसम्बर 1995 को हृदयगति रुकने से इनका असामयिक निधन हो गया। वर्तमान समय में मणि मधुकर के परिवार में उनकी पत्नी रचना मधुकर, पुत्री मीनल मधुकर और पुत्र हेमांग मधुकर हैं। रचना मधुकर उनकी दूसरी पत्नी हैं। पुत्री मीनल मधुकर अमेरिका में रॉ कम्युनिकेशन में निदेशक के पद पर कार्यरत हैं। पुत्र हेमांग मधुकर आर्किटेक्ट है।

मणि मधुकर को 1975 ई. में राजस्थानी काव्य संग्रह 'पगफेरो' पर केन्द्रीय साहित्य अकादमी के सर्वोच्च पुरस्कार से सम्मानित किया गया। कथाकार की हैसियत से उन्हें 'सफेद मेमने' के लिए प्रेमचंद पुरस्कार मिला। रस गन्धर्व नाटक पर कालिदास पुरस्कार के अतिरिक्त मणि जी को मध्यप्रदेश साहित्य परिषद द्वारा सेठ गोविन्ददास पुरस्कार से नवाजा गया। महाराष्ट्र नाट्य मण्डल ने मणि मधुकर को 'मामा बरेरकर' पुरस्कार के योग्य चुना और सम्मानित किया। मणि मधुकर प्रथम भारतीय लेखक हैं जिन्हें फ्रेंच अकादमी से 'मानद सदस्यता' का सम्मान प्राप्त हुआ है। उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र एवं राजस्थान की अकादमियों द्वारा वे अनेक बार पुरस्कृत और सम्मानित हुए हैं।

हैदराबाद से प्रकाशित मासिक पत्रिका 'कल्पना' (1966) के सम्पादन मण्डल में मणि मधुकर ने कार्य किया था। उन्होंने जयपुर से 'अकथ' (1968) पत्रिका का प्रकाशन भी किया था। यह पत्रिका साहित्यिक थी। वे एक सफल नाटककार और निर्देशक थे। रंगमंच से जुड़े होने के कारण उन्होंने 1970 ई. में ललित कला अकादमी की पत्रिका 'रंगयोग' का सम्पादन किया। संगीत नाटक

TH-17865

अकादमी एवं ललित कला अकादमी के विशिष्ट पत्र 'आकृति' में भी मणि–मधुकर ने कार्य किया। मणि मधुकर ने स्वतन्त्र पत्रकारिता और रचनात्मक लेखन द्वारा अपनी प्रतिभा का विस्तार किया।

काव्य यात्रा

मणि मधुकर नयी कविता के दौर के कवि हैं। उनकी कविता के केन्द्र में 'आम आदमी' रहा है। निम्न एवं निम्न मध्यवर्गीय आदमी ही आम आदमी है जिसकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति दयनीय है। इसी आम आदमी के दु:ख–दर्द से रू–ब–रू होने का कार्य नयी कविता के दौर के कवियों ने किया। इन कवियों ने शोषित जीवन की यातनाओं एवं भूख–प्यास से साक्षात्कार किया है।

मणि मधुकर ने शोषक और शोषित दोनों ही वर्गों की यथास्थिति को चित्रित किया है। शोषित का जीवन परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़ा रहता है। वह चाहकर भी विद्रोह नहीं कर पाता। कवि ने ऐसे शोषकों को पहचाना जिनका चारा सिर्फ गरीब हैं –

"वह उन हाथों को
पहचानता है
जो बेरों में गुठलियां
मिलाकर बेचते हैं और तोहमत का
थूक उछालते हैं सदा
हरी झाड़ियों की तरफ।"[2]

जनतन्त्र को चलाने वाला दमदार स्तम्भ सामान्य शोषित जन ही है। लेकिन वह अपनी क्षमता को पहचान नहीं पाता और सदैव शोषकों का शोषण रूपी ग्रास बनता रहता है –

"वे अन्धे और पंगु और वाचाहीन जो जनतन्त्र का
बोझ उठाने वाले
दमदार थम्बे हैं

कतई नहीं जानते कि वे क्या हैं और क्यों हैं
उन्हें अपनी हैसियत अपनी ताकत की कोई
परवाह नहीं न ही यह मलाल कि
सालों–साल वे बेगारी में इस्तेमाल किये जा रहे हैं।"[3]

स्वतन्त्रता के पश्चात् भी हालात जस की तस है। गरीब आदमी के लिए भारत स्वतन्त्र नहीं हुआ है अपितु शासक बदले हैं; लेकिन इन शासकों का कार्यों में अंतर नहीं है। शासक और शासित के मध्य सिर्फ आश्वासन का ही फासला होता है –

"नकाब के भीतर एक और नकाब
आश्वासन की
नकाब के बाहर एक और नकाब शासन की।"[4]

गरीबों का दुःख, विषाद, पीड़ा, ग्लानि एवं विवशता कवि के अन्तर्मन को छू गये हैं। मणि मधुकर ने करोड़ों देशवासियों की भूख–प्यास से साक्षात्कार किया है। उनकी संवेदना को आत्मसात किया है। उनके द्वारा चित्रित यथार्थ भोगा हुआ यथार्थ प्रतीत होता है। यही कारण है कि कवि की आम आदमी से संसक्ति रही है। कवि इन तिरस्कृत और अपमानित लोगों से सहानुभूति रखता है। मणि मधुकर को यह विश्वास है कि वे एक दिन अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध अवश्य मुहिम छेड़ेंगे –

"वे यातना में अपमान में धिक्कार में जी रहे हैं
क्योंकि उनके भीतर की सुगन्ध
जीवन से जुड़ी हुई है ...।"[5]

मणि मधुकर ने 'खण्ड खण्ड पाखण्ड पर्व', 'घास का घराना' और 'बलराम के हजारों नाम' काव्य–संग्रहों की रचना की। 'पगफेरो' राजस्थानी भाषा में लिखा गया काव्य–संग्रह है। 'पगफेरो' काव्य संग्रह में मणि मधुकर ने अपने मातृभूमि के प्रति अनन्य अनुराग दिखाया है। उन्होंने अपने अंचल के रीति–रिवाजों, परम्पराओं, तीज–त्योहारों, रूढ़ियों और मान्यताओं को ठेठ राजस्थानी भाषा में चित्रित किया है। उनकी कविताओं का लोकजीवन से गहरा जुड़ाव है। 'रातरांणी', 'पाडोसन' और 'उच्छव' कविताएँ लोकजीवन को प्रस्तुत करती हैं जैसे –

"गरण–गण हालै
नित विपदा री बाणी
पण
अन्धार बिछौवा में
थारे हांचल री याद ...।"[6]

मणि मधुकर के अधिकांश साहित्य में राजस्थान की सभ्यता और संस्कृति का जीवन्त दस्तावेज मिलता है। राजस्थानी कविता संग्रह 'पगफेरो' में स्थानीय रमणीयता की झाँकी प्रस्तुत की है। ठेठ राजस्थानी भाषा में रचा, यह कविता संग्रह समूची स्थानीय संस्कृति की मनोरम संस्तुति है।

कहानी संसार

मणि मधुकर ने अपनी मौलिक परिकल्पना और प्रतिभा के बल पर हिन्दी कहानी जगत् को अपनी ओर आकृष्ट किया है। 'हवा में अकेले', 'भरतमुनि के बाद', 'त्वमेव माता', 'एकवचन बहुवचन', 'चुनिन्दा चौदह', 'चुपचाप दुःख', 'हे भानमती' उनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं। 'हवा में अकेले' कहानी संग्रह रेगिस्तान की यन्त्रणा भरी जिन्दगी को रूपायित करता है। रघुवीर दयाल 'हवा में अकेले' कहानी संग्रह के बारे में लिखते हैं – "उनकी कहानियाँ हथेलियों के बीच से हवा के झोंके के मानिंद गुजर कर नहीं रह जाती, बे पाठकों को एक जलते–तपते रेगिस्तान में छोड़ देती हैं, जहाँ वह अपने इर्द–गिर्द मंडराते प्रेतों और महाराक्षसों को खुली आँखों से देख और पहचान ही नहीं सकता, उनसे संघर्ष भी कर सकता है।"[7] 'भरतमुनि के बाद' कहानी संग्रह में महानगरीय विडम्बनाओं और विषमताओं में जीने वाले थके–हारे लोगों का चित्रण किया है। मणि मधुकर ने अपनी कई कहानियों में 'मैं' शैली को अपनाया है। इस अर्थ में वे एक प्रयोगशील रचनाकार माने जाते रहे हैं। 'भरतमुनि के बाद' कहानी के कथा सन्दर्भों में साक्षी के रूप में 'मैं' को प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार की कहानी 'उजाड़ और अधमरे' है। इस कहानी को हिन्दी की श्रेष्ठ कहानियों में रखा जा सकता है। इस कहानी में बाड़मेर, जैसलमेर के सीमावर्ती क्षेत्र की युद्धकालीन स्थितियों का चित्रण किया गया है। युद्ध की तमाम घटनाओं दुर्घटनाओं का साक्षी 'मैं' है।

मणि मधुकर ने अर्थप्रधान युग की जटिलताओं एवं जटिलताओं से उत्पन्न समस्याओं का यथार्थपरक अंकन किया है। वे जीवन सत्यों एवं समस्याओं के प्रति सचेत और संवेदनशील रहे हैं। 'मरी हुई पहचान' कहानी में जटिल जीवन की सहज अभिव्यक्ति की गई है। सामाजिक सम्बन्धों के खोखलेपन को भी यह कहानी उजागर करती है।

सूखा एवं अकाल की भयावह स्थिति की यथार्थपरक अभिव्यक्ति 'मरी हुई पहचान' कहानी में मिलती है। आर्थिक बदहाली के कारण नौबतराम अपने खेत नहीं जोत पाता है। अंत में विवश होकर अपनी औरत को बेच देता है। अपनी औरत को बेचकर नौबतराम अत्यंत दुखी हो जाता है – "तुम्हें पता है मैंने यह फैसला कितनी कठिनाई से लिया था। आठ बरस तक जमीन को सुखा कर इन्दर राजा ने बरसात दी और मेरा खेत बिना बीज बुबाई को तरसता रहा। जो हल की मूठ पर हाथ न रखे वह हलधर ही क्या ? मैंने हीरालाल महाजन के पांव पकड़े, चिमना चौधरी के आगे नाक रकड़ी, पिरभूसिंह के रावले में रात भर गिड़गिड़ाता रहा पर कोई टस से मस नहीं हुआ। तब मेरे सामने इसके सिवा और क्या चारा था कि मैं अपनी लुगाई को बेच दूँ।"[8]

मणि मधुकर ने सामन्तवादी मनोवृत्ति को भी अपनी कहानियों का विषय बनाया है। गाँव के जमींदारों के कारनामों से सामान्य जन संत्रस्त हैं, भयावह हैं। गाँव की गरीब, अनपढ़ औरतों के साथ चौधरी या जमींदार बदसलूकी करता है। वे औरतें भी इसे अपनी नियति समझकर सहन करती रहती हैं। औरतों का शारीरिक शोषण आमबात है। 'त्वमेव माता' कहानी में एक छोटे से बच्चे को भी यह पता है कि उसकी माँ को पुल पर काम करने हेतु मिस्त्री के साथ सोना पड़ता है। वह बच्चा कहता है –

"ठीक है मै। कुछ नहीं बोलूँगा। बल्ली एक जलती हुई थेपड़ी को उलट पलटने में लग गया। तुम मिस्तरी के साथ सोने के लिए यहाँ आई हो न ? जाओ सूँपे के अन्दर चली जाओ।"[9]

मुख्य रूप से मणि मधुकर ने ग्रामीण परिवेश में होने वाले व्यभिचार, जीवन की विषमताओं और विडम्बनाओं, अकाल के भयावह रूप का चित्रण अपनी कहानियों में किया है। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि मधुकर की कहानियों में जीवन की जटिलताओं की सहज अभिव्यक्ति हुई है।

नाटक एवं एकांकी साहित्य

प्रसिद्ध नाट्यधर्मी मणि मधुकर ने 'रसगन्धर्व', 'दुलारीबाई', 'खेला पोलमपुर', 'अंधी आँखों का आकाश', 'इकतारे की आँख', 'बोलो बोधिवृक्ष', 'बुलबुलसराय', 'इलायची बेगम' जैसे नाटकों की रचना की। ये नाटक रंगमंच की दृष्टि से सफल कहे जा सकते हैं। कई नाटकों का निर्देशन स्वयं मणि मधुकर ने किया था। उन्होंने अपने नाटकों में कथानक की अपेक्षा संवाद और चरित्र को अधिक महत्त्व दिया है। मणि मधुकर के नाटकों के बीच बीच में संवाद अक्सर कविता के रूप में सामने आते हैं। यह उनके कवि होने का प्रभाव है।

'रसगंधर्व' मणि मधुकर की प्रथम नाट्य रचना है। इसकी कथावस्तु बन्दीगृह की है। इस नाटक में अ, ब, स, द चार कैदी हैं। इन कैदियों के माध्यम से मणि मधुकर ने प्रजातन्त्र को एक जेल के रूप में देखा है। ये कैदी आम जनता के प्रतीक हैं। मायावी राजसत्ता सदैव इन्हें कैदी ही बनाकर रखना चाहती है। राजकुमारी राजसत्ता का प्रतीक है। इस राजसत्ता को ही सारे लोग प्राप्त करना चाहते हैं। इस नाटक में लेखक ने आधुनिक नारी की महत्त्वाकांक्षाएँ, न्याय व्यवस्था का खोखलापन, आत्महत्या, मंहगाई, बेरोजगारी, दूषित राजनीति को अपना विषय बनाया है।

'इकतारे की आँख' नाटक में मणि मधुकर ने कबीर के जीवन और परिवेश को एकसूत्र में गूँथा है। नाटककार ने इस नाटक में तत्कालीन धार्मिक वातावरण और साम्प्रदायिक स्थिति को प्रस्तुत किया है। घोर अराजकता के दौर में कबीर के माता–पिता को मरवा दिया जाता है। पण्डित और मुल्ला–मौलवी अपने धर्म के नाम पर जनता में अंध विश्वास फैलाते हैं। धार्मिक कट्टरता की उस आँधी में कबीर एक दीवार बनकर खड़े होते हैं। कबीर अपनी व्यंग्योक्तियों के माध्यम से धर्म के ठेकेदारों को तिलमिला देते हैं और वे कबीर के दुश्मन बन जाते हैं। नगर कोतवाल के हुक्म से कबीर को गंगा में फेंक दिया जाता है, लेकिन कबीर जिन्दा बच जाते हैं। तत्पश्चात् बीमारी से उनकी मृत्यु हो जाती है। यह नाटक एक करुणार्द्र संगीत के साथ समाप्त हो जाता है। धार्मिक ढोंग, पाखण्ड और रूढ़िवादिता पर यह नाटक कड़ा प्रहार करता है।

'खेला पोलमपुर' नाटक में शासकों की क्रूर, निर्दयी और विलासी प्रवृत्ति

को उजागर किया है। पोलमपुर का शासक लक्खीशाह एक क्रूर और अत्यंत निर्दयी प्रवृत्ति का शासक है। उसकी रानी फूलकंवर एक विलासी और ऐशो–आराम पसन्द औरत है। लक्खीशाह पोलमपुर की प्रजा पर अनगिनत अत्याचार करता है। उनके अत्याचारों से सामान्य जनता दुखी है। समरू का चरित्र सर्वहारा और शोषित वर्ग के चरित्र को उजागर करता है। समरू बुद्धिचातुर्य से रानी फूल कंवर और लक्खी के क्रूर आतंक से पोलमपुर की जनता को मुक्त करा देता है। 'बुलबुलसराय' नाटक में साम्राज्यवाद और शोषण के विरुद्ध एक स्वर मिलता है। मणि मधुकर की मान्यता है कि प्रत्येक आदमी के भीतर एक तानाशाह है जो बड़ा भयावना, क्रूर और निर्लज्ज है। इसमें मायासुर की कल्पना द्वारा आदमी के भीतर बैठे तानाशाह से संघर्ष का आह्वान किया है। प्रचण्डसेन के माध्यम से साम्राज्यवाद के दुश्चक्रों पर व्यंग्य किया गया है।

मणि मधुकर के नुक्कड़ नाटकों का स्थान भी महत्त्वपूर्ण है। इनके नुक्कड़ नाटक अत्यंत लोकप्रिय रहे हैं। नुक्कड़ नाटक दर्शकों के अधिक निकट होते हैं तथा इनमें सम्प्रेषण की क्षमता भी अत्यधिक तीव्र होती है। उनके 'रसगन्धर्व' नाटक को चंडीगढ़ में गुरुचरण सिंह चन्नी के निर्देशन में नुक्कड़ नाटक के रूप में खेला गया और अत्यधिक सफल भी रहा। स्वयं मणि मधुकर ने भी 1966–67 ई. में नुक्कड़ नाटक किये हैं। 'नाच', 'तीन पहाड़', 'बोझ', 'फन्दे', 'कब्र का हिस्सा', 'सब लोग' उनके प्रमुख नुक्कड़ नाटक हैं। नुक्कड़ नाटक लिखने के पीछे मणि मधुकर का उद्देश्य है कि इन नाटकों के माध्यम से सामयिक समस्याओं की लड़ाई सीधी व मूर्त होती है। वे कहते हैं कि – "अगर मुझे प्रत्यक्ष और सामयिक लड़ाई लड़नी होगी तो मैं नुक्कड़ नाटक लिखूँगा। जब मुझे इस लड़ाई को बहुत दूर तक ले जाना होगा, उसे एक छोटे अंश से आगे फैलाकर दीर्घता में उतारना होगा तो मैं बुलबुलसराय जैसा नाटक लिखूँगा।"[10]

'सलवटों में संवाद' नामक एकांकी संग्रह में छह एकांकी हैं – 'छोटे–बड़े', 'सलवटों में संवाद', 'टोपियाँ', 'जुगलबन्दी', 'नक्शे में निधन' एवं 'दरवाजा' मुख्य हैं। इन एकांकियों के माध्यम से मणि मधुकर ने सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं प्रशासनिक विसंगतियों पर प्रहार किया है। सीधी एवं सरल भाषा में गिरते मानवीय मूल्य, टूटते–बिखरते मानवीय सम्बन्ध, भविष्य के प्रति अनिश्चितताओं, युवा पीढ़ी की पथभ्रष्टता की व्यथा–कथा को चित्रित किया

है। ये एकांकी रंगशालाओं के अतिरिक्त मैदानों और नुक्कड़ों पर भी सफलतापूर्वक मंचित किये गये हैं।

रिपोर्ताज

द्वितीय विश्वयुद्ध के समय नवीन विधा 'रिपोर्ताज' का जन्म हुआ। रिपोर्ताज में रचनाकार किसी घटना या तथ्य वस्तु का वर्णन इस प्रकार करता है मानो उसका वह प्रत्यक्षदर्शी हो। प्रसिद्ध नाटककार मणि मधुकर ने अनेक रिपोर्ताज लिखे। 'सूखे सरोवर का भूगोल' उनके रिपोर्ताजों का संग्रह है। इन रिपोर्ताजों में मणि मधुकर ने राजस्थान के भीषण अकाल और उस अकाल से पीड़ित लोगों की बदहाली का वीभत्स चित्रण किया गया है। इसके अतिरिक्त इस संग्रह में गाडिया लुहारों की जीवन शैली, नवलगढ़ की हवेलियों, धन–कुबेरों के ठाट–बाट, गली–चौराहों की रौनक और पीवणा सांप के मृत्यु दण्ड का चित्रण भी किया है। इस संग्रह में यदि एक ओर अकाल की भयावहता और समाज के ठेकेदारों द्वारा सहायता शिविरों में धांधली का चित्रण किया है तो दूसरी ओर आमेर की कथा, बैराठ, वाणगंगा में पाण्डवों के अज्ञातवास की चर्चा, अरावली के डूंगरियों की एक छोर का चित्रण, भीलों की विभिन्न जातियों एवं कर्मठता का चित्रण, हल्दी घाटी की गुफाओं में महाराणा प्रताप के कीर्तियुक्त गाथा एवं स्मृति चिह्नों का चित्रण अत्यंत कुशलता के साथ किया है। इन रिपोर्ताजों की भाषा सरल एवं सहज है तथा चित्रात्मकता से युक्त है।

संकलन : पिछड़ा पहाड़ा

प्रस्तुत संकलन में मणि मधुकर ने अपनी कहानियों, कविताओं, नाटकों, एकांकियों व रिपोर्ताजों का सांगोपांग चयन किया है। उनके रचना कर्म में सदैव वैविध्य और विस्तार रहा है। इस संकलन में मणि मधुकर की कहानियों – फरिश्ते, कितना ईंधन, सुलेमान, चुपचाप दुःख, बैताल कथा, बैल, आखिरकार, रणक्षेत्र, फाँसी, यमराज, हालत, उजाड़ और अधमरे', एक वचन – बहुबचन, हवा में अकेले – कविताएँ – दावत, नर्तकी, समरकाल–1, समरकाल–2, एक पुरानी

औरत, लाओ–लाओ, तुमूलनाद, आँखों देखा उत्सव, गिलहरी के लिए, हक, जूड़ा बांधते हुए, मौसेरे भाई, इलाका, नींद में वसन्त की याद, घास का घराना, – नाटक एकांकी – बुलबुलसराय, जुगलबन्दी, रिपोर्ताज – पानी सिर्फ आँखों में, जख्मों का जश्न, भुने हुए प्रेम का स्वाद, तितलियों के घर और जलते हुए पहाड़, संस्मरण – 'आलोक पर्व के बाद फिर अंधकार' को संकलित किया गया है।

संस्मरण

उड़ती नदियां : मणि मधुकर ने 'उड़ती नदियां' नामक रचना संग्रह में जीवन के विविध पहलुओं से जुड़े संस्मरणों का आकर्षक चित्रण किया है। 'ये कैसे गन्धवान' में पणजी के वसन्तोत्सव का अत्यंत मनोरम चित्रण किया है। 'सिर्फ एक हवामहल' में गुलाबी नगरी की महत्ता वर्णित है। गलताजी की पहाड़ी, भोर के सूरज, हवेलियों के सुन्दर कांच और मीनाकारी का चित्त को लुभाने वाला वर्णन किया है। न केवल राजस्थान वरन् उन्होंने देश–विदेश की यात्राओं के सुनहरे संस्मरणों को भी इस संग्रह में संग्रहीत किया है। 'पहाड़ का दुःख पहाड़ की लड़ाई' में इन्होंने केलांग और गाजा के बर्फीले तूफान का यथार्थ चित्रण किया है। मित्रो लोगों के रहन–सहन, उनकी सांस्कृतिक परम्पराओं एवं अंधविश्वासों को भी चित्रित किया गया है। इसके अतिरिक्त मणि मधुकर ने हजारी प्रसाद द्विवेदी, यशपाल, फिल्मकार सत्यजीतराय एवं नृत्य–निर्देशक उदयशंकर के साथ अपने संस्मरणों को 'उड़ती नदियां' में ही संकलित किया है।

इसके अतिरिक्त मणि मधुकर ने 'सुपारीलाल' (बाल उपन्यास), अनारदाना (बाल कविताएँ) और 'ज्योर्जी दिमित्रोव' (ज्योतिर्मयदत्त की जीवनी) की रचना की। 'अपने आसपास' (राजस्थान के शिक्षकों की कहानियाँ) और 'कोमल गान्धार' (हिन्दी लेखिकाओं की श्रेष्ठ प्रेम कहानियाँ) का सम्पादन भी मणि मधुकर ने किया था। 'The Poetry of Mani Madhukar' शीर्षक से मणि की चुनी हुई कविताओं का माइकेल रेयन और रोहिणी सान्याल द्वारा अनुवाद भी प्रकाशित हुआ है।

उपन्यास साहित्य

मणि मधुकर के चार उपन्यास प्रकाशित हुए हैं – सफेद मेमने (1971), पत्तों की बिरादरी (1979), मेरी स्त्रियाँ और पिंजरे में पन्ना। चार में से तीन उपन्यासों के कथानकों का घटना केन्द्र राजस्थान का मरु अंचल है। 'सफेद मेमने' उपन्यास में अकेलापन, संत्रास, ऊब, सेक्स विसंगति और रेगिस्तान की मनहूसियत जिन्दगी को चित्रित किया है। 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में शरणार्थी कैम्प में होने वाली गन्दी राजनीति को उपन्यासकार ने कथानक का मूल विषय बनाया है। आधुनिक युग में नारी जीवन की आर्थिक विडम्बनाओं को लेकर 'मेरी स्त्रियाँ' जैसा उपन्यास लिखा गया है। 'पिंजरे में पन्ना' उपन्यास कुछ खानाबदोश लोगों, गाडिया लुहारों एवं सुरध्याणी ख्याल वालों को अत्यंत निकटता से सहेजता है।

सफेद मेमने

'सफेद मेमने' बहु चर्चित और पुरस्कृत उपन्यास है। इस उपन्यास का परिवेश महानगर न होकर रेगिस्तान है। उपन्यास का शीर्षक प्रतीकात्मक है। 'मेमने' उपन्यास के अभिशप्त पात्रों का प्रतीक है जबकि 'सफेद' पात्रों के जीवन में व्याप्त अकेलेपन, कुण्ठा और संत्रास को चित्रित करता है। इस उपन्यास के वर्णित पात्र जीवन से पलायन नहीं करते अपितु परिस्थितियों से संघर्ष करते हैं। डॉ. इन्द्रनाथ मदान इस उपन्यास के बारे में लिखते हैं – "सफेद मेमने का परिवेश महानगर न होकर रेगिस्तान है जिसके एकान्त में और नगर की भीड़ में अकेलेपन, अजनबीपन, बेगानेपन के बोध में अंतर मात्र इतना है कि रेगिस्तान के एकांत में यह अधिक गहरे में है। इस उपन्यास के कुछ पात्र या मेमने जो सफेद हैं नगर बोध को लिये हुए हैं, राजस्थान के एक छोटे से गाँव नेगिया में रहते हैं जिसका खालीपन पराया पराया लगता है।"[11] 'सफेद मेमने' उपन्यास के पात्र अपने परिवेश को क्रूर, शोषक, उत्पीड़क समझकर पलायन करते हैं।

इस उपन्यास में भगोड़ों की कथा है। रामौतार, जस्सू, भानमल, रक्खे, बन्ना जैसे पात्र पलायन के बाद नेगिया गाँव में इकट्ठे होते हैं; लेकिन वे पुनः

पलायन को मजबूर हो जाते हैं। पोस्टमास्टर रामौतार नौकरी छोड़कर कौसानी लौट जाता है। डाक लाने वाला जस्सू नक्सलवादियों के साथ चला जाता है, सुरजा डकैत बन जाती है, बन्ना और सन्दो पाकिस्तान चले जाते हैं। इस अर्थ में यह उपन्यास पलायन से पलायन का उपन्यास ठहरता है।

सातवें दशक के उपन्यासो की मुख्य प्रवृत्ति सेक्स विसंगति थी। 'सफेद मेमने' उपन्यास में भी इस प्रवृत्ति की छाप मिलती है। इस उपन्यास में सेक्स एक भूख के रूप में आया है। अधेड़ पति रामौतार से असन्तुष्ट युवा बन्ना देह की भूख सन्दो से मिटाती है, जस्सू पर सुरजा का नशा है और पशु डाक्टर भानमल 'नसचढ़ी भैंस' के साथ संभोग करता है। इन्द्रनाथ मदान के अनुसार – "इस उपन्यास में संभोग कभी खुले टीले पर है तो कभी झोपड़ी में है। 'मरी हुई औरत से संभोग' (एक कविता शीर्षक) वाले दौर में यौन केन्द्रित रचनाओं की भीड़ में एक रचना सफेद मेमने भी है बल्कि उघड़ी आंचलिक अभिधाओं और भैंस प्रकरण के कारण इस वर्ग में शीर्षस्थ है।"[12] 'सफेद मेमने' में तत्कालीन साहित्यिक प्रवृत्तियाँ – अकेलापन, संत्रास, ऊब, निरर्थकताबोध, आंचलिकता, सेक्स आदि एक साथ मिल जाती हैं।

पत्तों की बिरादरी

मणि मधुकर ने अपने दूसरे उपन्यास – 'पत्तों की बिरादरी' (1979) में रेगिस्तानवासियों को ही कथा के केन्द्र में रखा है। उन्होंने उपन्यास का शीर्षक चारण कवि उज्जैदान से लिया है – "दरख्त एक ढाणी है, एक गाँव है और पत्ते उसके वाशिन्दे होते हैं, साथ बोलते हुए, एक सा जीवन जीते हुए ... वे एक ही बिरादरी के अनेक लोग। लेकिन ऋतुओं की मार से जब पेड़ उजड़ने लगता है तो पत्ते सूख–सूख़कर गिरने और बिखरने लगते हैं। अपने गाँव को छोड़कर, दुःख दैन्य के बोध को ढोते हुए वे पत्ते ... जाने कहाँ कहाँ तक रेलों में बहते उड़ते चले जाते हैं ... यही है पत्तों की अपनी बिरादरी।"[13] बाडमेर क्षेत्र के अकाल सहायता कैम्पों में रह रहे असहाय पत्तों की करुण कथा को इस उपन्यास में उकेरा गया है। सहायता कैम्पों में सरकारी अफसर, राजनेता, सेठ साहूकार ही समाजसेवा के बहाने सामान्य जनता का शोषण कर रहे हैं। सहायता कैम्पों में जारी शोषण,

भ्रष्टाचार और पीड़न को मणि मधुकर ने सच्चाई के साथ उजागर किया है। समाजसेवक ही समाज के शोषक होते हैं। 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में पुष्पाबाई, ग्यारसीलाल, और रावता समाज के शोषक हैं। इनका सम्बन्ध राजनेताओं और डाकुओं से भी है। अकाल राहत के लिए सरकार द्वारा जो अन्न भेजा जाता है उसकी ये लोग तस्करी करते हैं। वेश्या की महत्त्वाकांक्षी पुत्री पुष्पाबाई राजनेताओं को खुश करने के लिए देह का व्यापार भी करती है। पुष्पाबाई एम.एल.ए. बनने के लिए जैतपाल सिंह की रखैल बन जाती है। बदरू जैतपाल सिंह से कहता है – "वही जैतपाल सिंह उसी की तो रखैल रांड है। एम.एल.ए. बनने के सपने देखती है चुडैल और जैतपाल सिंह बैठा है दिल्ली में रोज सात मिनिस्टरों के जांघिये सूंघता है।"[14]

मणि मधुकर ने इस उपन्यास में देशविभाजन का मुद्दा भी उठाया है। शोषितों का नेतृत्व कर्त्ता शुबो कहता है – "फालतू का लफड़ा खड़ा मत करो पुष्पाबाई। किसी माँ के यार ने पाखेस्तान बना दिया, किसी ने ईंदेस्तान। सिरफिरे स्याले। उनके बनाने से क्या होता है ? मुझे तो उन्होंने नहीं बनाया ? तुम्हें भी नहीं। सो हमें मुल्कों में बांटकर अलग करने वाले वो घसियारे ... कौन होते हैं ?"[15] निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि समीक्ष्य उपन्यास में भ्रष्ट राजनीति और अवसरवादी राजनेताओं पर करारा व्यंग्य किया गया है।

मेरी स्त्रियाँ

'सारिका' (16 जून, 1981) में प्रकाशित इस उपन्यास में मणि मधुकर राजस्थान के रेगिस्तानी अंचल से दूर हटे हैं। लेखक जो उपन्यास का नरेटर भी है, के जीवन में छह स्त्रियाँ आती हैं – मकान मालिक मोरचंद की औरत गुनवंती, ऐयाश जीनत, अध्यापिका अन्ना, अन्ना के बेटे चीनू की मित्र नीरा, नीलम्मा और जमना। आज के आधुनिक युग में नारी जीवन की आर्थिक विडम्बनाएँ इस उपन्यास के केन्द्र में रही हैं। उपन्यास में वर्णित स्त्रियाँ अपने सामाजिक दायित्वों को भूलकर अपने आपको विलासिता में डुबा देना चाहती हैं। हुकुमत और दौलत पाने के लिए ये स्त्रियाँ अपने देह का सौदा कर लेती हैं। जीनत और नीरा विलास और ऐश्वर्य के लालच में स्वयं को धोखा देती रहती हैं। जीनत लेखक का सहारा

लेकर बूढ़े नवाब से निकाह कर लेती है। वह कहती है – "मैंने सोच लिया है, अब किसी की चाकरी–हाजिरी नहीं बजाऊँगी, बिस्तर पर पड़ी रहूँगी हुक्म चलाऊँगी, राज करूँगी, विलास भोगूँगी।"[16] राजनैतिक, प्रशासनिक व्यवस्था पर प्रहार एवं नारी की आर्थिक विषमताओं को उजागर करने के अतिरिक्त इस उपन्यास में पूँजीपतियों द्वारा मजदूरों पर होने वाले शोषण का भी चित्रण किया गया है। विजयवाडा के नवाब की क्रूरता, मजदूरों की विवशता को भी इस उपन्यास में वर्णित किया गया है। अर्थ के खूँटे से बंधी नीरा अपने ऐश–आराम के लिए गुलामी करने को तैयार है जबकि नायक एकाकी जीवन जीता है। इसका चित्रण इस उपन्यास में मनोवैज्ञानिक ढंग से हुआ है।

पिंजरे में पन्ना

साप्ताहिक हिन्दुस्तान में 7 जून 1981 से 9 अगस्त 1981 तक धारावाहिक 10 किश्तों में प्रकाशित इस उपन्यास की कथाभूमि भी राजस्थान का रेगिस्तान ही है। रम्या गांगुली लोकधर्मी नाट्यकला अध्येता शमीक बाबू से अपनी माँ – पन्ना नटी का इतिहास जानने हेतु बरांस ढाणी आती है। रम्या बरांस ढाणी में चेतराव जो कि उसका पिता था, के यहाँ ठहरती है। सुरध्यानी ख्याल मण्डली तक पहुँचने हेतु रम्या ने गाडिया लुहारों के साथ स्वयं को एकाकार किया। इसी दौरान नंदे भी रम्या के जिन्दगी में आया। नंदे वस्तुतः प्रख्यात चित्रकार आनंदसोनकर थे। मरु अंचल के रेतीले राग को अपनी कूंची के रंगों में रंगना चाहते हैं। रम्या और नंदे अपनी जड़ों की खोज में व्यस्त हैं। इस उपन्यास में मणि मधुकर ने राजस्थानी साहित्य की विधाओं जैसे लोक नाटक, ख्याल और लोकगीत को भी स्थान दिया है।

इसके अतिरिक्त इस उपन्यास में राजनीतिक स्थिति का भी चित्रण मिलता है। रिछपाल के बहाने मणि मधुकर ने समकालीन भ्रष्ट राजनीति का पर्दाफाश किया है। रिछपाल पैसों और शराब के बल पर वोट खरीदकर चुनाव जीतता है। रिछपाल के आदमी गाडुले लुहारों को जबरन रोककर उन्हें वोट डालने को मजबूर करते हैं। राजनीति और प्रशासनिक अव्यवस्था, नारी की आर्थिक विषमताजन्य स्थिति, पूँजीपति वर्ग की शोषण प्रक्रिया, मूल्य संक्रमण और

अभिशप्त मानवीय जीवन की विसंगतियों की मार्मिक अभिव्यक्ति मणि मधुकर के उपन्यासों की महती विशेषताएँ हैं।

मणि मधुकर के उपन्यासों की प्रमुख विशेषता है उनकी काव्यात्मकता और चित्रात्मकता। चारों उपन्यासों में कविता के पर्याप्त उदाहरण विद्यमान हैं। 'सफेद मेमने' में गोगाजी की काव्यकथा, पत्तों की बिरादरी में उज्जैदान की कविता, पिंजरे में पन्ना में भायकोव्यस्की और मेरी स्त्रियाँ में सुकान्त भट्टाचार्य की कविता के उदाहरण मिलते हैं। मणि स्वयं कवि भी थे, इसलिए उनकी औपन्यासिक भाषा में काव्यात्मक हस्तक्षेप मिलता है। काव्यात्मक हस्तक्षेप के बावजूद उनकी भाषा में सजीवता, चित्रात्मकता और जीवंतता का गुण विद्यमान है।

मणि मधुकर पर परिवेशगत प्रभाव

रचना एवं रचनाकार पर तात्कालिक परिवेश एवं परिस्थितियों का प्रभाव अवश्य पड़ता है। तत्कालीन परिवेश से हटकर किसी भी कृति का सृजन संभव नहीं है। अगर कोई रचनाकार नितांत घुटन, निराशा, विघटन और कुंठाग्रस्त स्थिति में स्वप्नलोक और परलोक की फंतासीनुमा गाथाएँ कहता है तो यह बनावटी लगेगा और अगर प्रणय वेला के गीत गाए तो असंगत एवं अप्रासंगिक लगेगा। अतः यह स्पष्ट है कि साहित्य सृजन में परिवेश की अमिट छाप होती है। मणि मधुकर का साहित्य–सृजन परिवेशगत संवेदनाओं की प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति है। स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक असफलताओं के पश्चात् जन्मी मध्यवर्गीय कुण्ठा, पीड़ा, निराशा और घुटन को मणि मधुकर की रचनाओं में देखा जा सकता है। स्वतन्त्रता के पश्चात् भी भारतीय समाज में सामन्तवाद, साम्राज्यवाद का बोलबाला था। सामाजिक एवं आर्थिक शोषण से भारतीय समाज मुक्त नहीं हो सका। इस शोषण की अग्नि में जनसाधारण जलता रहा। मणि मधुकर ने इन्हीं शोषितों की पीड़ा को अपने काव्य के माध्यम से व्यक्त किया है। उन्होंने मध्यवर्गीय कुण्ठा, निराशा और छटपटाहट से साक्षात्कार किया और काव्य को सशक्त अभिव्यक्ति दी।

परिवेशगत विसंगतियों और विडम्बनाओं से मणि मधुकर अछूते नहीं रहे हैं। उन्होंने अपने कथा साहित्य और काव्य में इन्हीं विसंगतियों को उजागर किया

है। मणि मधुकर के उपन्यास 'पत्तों की बिरादरी', 'सफेद मेमने', 'मेरी स्त्रियाँ', 'पिंजरे में पन्ना' युगीन परिस्थितियों का खुला दस्तावेज है। उनके नाटकों में तद्युगीन साम्राज्यवादी रूढ़ियों व दोषयुक्त शासन–प्रणाली पर कुठाराघात करने का प्रयास किया गया है। स्वतन्त्रता आन्दोलन के प्रारम्भ से लेकर चीन व पाकिस्तानी आक्रमण, बंगलादेश के साथ युद्ध और अकाल की भयावह स्थिति को कवि ने ईमानदारी के साथ वर्णित किया है। मणि मधुकर के नाटक 'दुलारीबाई', 'रसगन्धर्व', 'बुलबुलसराय', 'खेला पोलमपुर' 'बोलो बोधिवृक्ष' में इन्हीं स्वरों को प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति दी गई है। मणि मधुकर के कहानी संग्रहों, नुक्कड़–नाटकों, रिपोर्ताज आदि साहित्यिक विधाओं में परिवेशजन्य परिस्थितियों की स्पष्ट छाप परिलक्षित होती है। बदलते परिवेश और परिवर्तित जीवन मूल्यों के साथ निरन्तर मणि मधुकर का स्वर बदलता रहा है।

राजनीतिक परिवेश

मणि मधुकर ने जब साहित्य सृजन प्रारम्भ किया, उस समय राजनीतिक उथल–पुथल से हमारी सामाजिक और धार्मिक व्यवस्था बहुत प्रभावित हुई। भारतीय राजनीति दलगत स्वार्थों में फँसकर रह गई। भ्रष्ट राजनेताओं की स्वार्थलोलुपता के कारण जनता का शोषण होने लगा। सन् 1962 के चीनी आक्रमण, 1965 के पाकिस्तान से युद्ध के कारण भारतीय अर्थव्यवस्था भी चरमरा गई। हिन्दू–मुस्लिम झगड़ों से उपजा तनाव, कमरतोड़ मंहगाई तथा ढीली पड़ती अर्थव्यवस्था प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से इन्हीं युद्धों की देन है। महानगरीय सभ्यता के बढ़ते प्रभाव, स्त्री–स्वातन्त्र्य, युवा वर्ग के आक्रोश, राजनेताओं की पदलोलुपता आदि ने मणि मधुकर के साहित्य पर अक्षुण्ण प्रभाव डाला। उनकी रचनाओं में विघटित होते जीवनमूल्यों, स्त्री–स्वातन्त्र्य के दुष्परिणाम और युवा वर्ग के विक्षोभ को भली भाँति देखा जा सकता है। मणि मधुकर ने अपनी विभिन्न रचनाओं में राजनीतिक स्थिति का बेवाक चित्रण किया है।

'पत्तों की बिरादरी' कृति में मणि मधुकर ने राजनीतिक स्थिति का खुलकर चित्रण किया है। इस उपन्यास में नारी की महत्त्वाकांक्षाएँ चरम पराकाष्ठा तक पहुँच गई हैं। राजनीति में प्रवेश पाने के लिए पुष्पाबाई अपने जिस्म तक का

सौदा कर लेती है। एम.एल.ए. बनने के लिए वह जैतपाल सिंह की रखैल तक बन जाती है। बदरू जैतपाल सिंह और पुष्पाबाई के बारे में कहता है – "वही जैतपाल सिंह उसी की तो रखैल रांड है। एम्मेले बनने के सपने देखती है चुडैल और वो जैतपाल सिंह बैठा है दिल्ली में। नेम से रोज रात मनीश्टरों के जांघिये सूंघता है।"[17] इसी प्रकार पुष्पाबाई एक जगह शुबो से कहती है – "गजसिंहपुर का प्रधान राजनीति भी अच्छी करता है। कहता है पुष्पाबाई, तुम किसी तरह भादरा से कांगरेस पाल्टी का टिकट एक बार जुगाड़ लो, एम्मेले बनाकर भेजने का जिम्मा मेरा। स्योर जीत है। यही नहीं वो तो मुझे फिर मन्त्री बनाने के वास्ते भी पैसा और जोड़–तोड़ लगाने के लिए तैयार है।"[18] इसी तरह पुष्पाबाई राजनीति में फंस कर अपना सारा जीवन बर्बाद कर लेती है। इस उपन्यास में मणि मधुकर ने राजनीतिक स्थिति का यथार्थ चित्रण करके क्रूर राजनीतिज्ञों पर करारा व्यंग्य किया है। इसी प्रकार 'पिंजरे में पन्ना' उपन्यास में भी भ्रष्ट राजनीति का खुला चित्रण किया गया है। रिछपाल चुनाव लड़ने के लिए धन को पानी की तरह बहाता है। रिछपाल के आदमी गाडुले लुहारों को जबरन रोककर बन्दूक की नोंक से वोट डलवाते हैं। इसी प्रकार 'मेरी स्त्रियाँ' उपन्यास में भी जीनत और नवाब साहब राजनीति के चक्रव्यूह में फंसे हैं। जीनत लेखक से कहती है – "चार महीने बाद एसेम्बली का चुनाव होने वाला है, नवाब उसमें खड़े होंगे।"[19]

उपन्यासों की भाँति ही मणि मधुकर ने अपनी कविताओं के माध्यम से भी राजनीतिक उठा–पटक के फलस्वरूप उपजे आक्रोश और विक्षोभ का चित्रण किया है। स्वार्थी राजनेता भोली–भाली जनता पर चुनाव थोपते हैं। चुनाव के समय राजनेता अनेक वादे करते हैं लेकिन चुनाव के पश्चात् उन वादों से मुकर जाते हैं। चुनावी माहौल में जनता मंत्री को चाहे सुग्गा कहे या नायक या फिर श्वान या ढोल मंत्री महोदय को कोई फर्क नहीं पड़ता –

"कुछ भी कह दो तुम,
मंत्री को
नायक, सुग्गा, जूता–ढोल
राशन मंहगा ही मिलेगा
सरकार बकरी है या भैंस या
बिना पैंदे की देगची

मौसम का रूख नहीं बदलेगा
सोचता रहा लगातार
क्या हुआ
आखिर क्या हुआ आम चुनाव के बाद।"[20]

"खण्ड–खण्ड पाखण्ड पर्व" में समूची व्यवस्था को खण्ड–खण्ड होते देख कवि ने जो व्यंग्य किया है वह कवि की अनुभूति की सघनता का परिचायक है। कवि के स्वर में विद्रोह का भाव है। वह जानता है कि ये लोग रेत में बिखरे हुए बीज की तरह हैं, जिस दिन पल्लवित और पुष्पित होंगे उस दिन अपने पैरों में पड़ी अभिशाप की बेड़ियों को निकाल फेकेंगे :

"अभी वे बालू में विखरे हुए बीज हैं
उगेंगे तो एकजुट फसल के
सरफरोश पान–फूलों की तरह उफनेंगे
अभी मुझे प्रतीक्षा है समर–सोखों की
नखो के नश्तर बनने की।"[21]

निष्कर्षतः तत्कालीन राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार, कुर्सी लिप्सा, छात्र असंतोष, दलगत राजनीति और राजलिप्सा में सम्बन्धों की टूटन आदि का यथार्थ चित्रण मणि मधुकर के साहित्य में मिलता है। परिवेशगत राजनीति से प्रभावित होकर ही मणि मधुकर ने राजनीति पर बेलाग टिप्पणी की है।

मणि मधुकर और सामाजिक परिवेश

सामाजिक परिस्थितियों में अनेकानेक परिवर्तन हुए यथा – नारी स्वातन्त्र्य, युवा पीढ़ी का आक्रोश, मध्यवर्ग की भूमिका, जाति व्यवस्था, परिवार में विघटन आदि। द्रुतगति से परिवर्तित होते इस सामाजिक परिवेश का तत्कालीन साहित्यकारों पर गहरा प्रभाव पड़ा। 60–70 के दशक में तत्कालीन साहित्यकारों ने उपर्युक्त सामाजिक समस्याओं पर कलम चलाई। इस दशक लेखकों में कमलेश्वर, मोहन राकेश, मुद्राराक्षस, निर्मल वर्मा, उषाप्रियंवदा, कृष्णा सोबती, दीप्ति खण्डेलवाल, मणि मधुकर, शैलेश मटियानी, हिमांशु जोशी, श्रीलाल शुक्ल, राजेन्द्र अवस्थी, यादवेन्द्रशर्मा चन्द्र आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

मणि मधुकर पर सामाजिक परिवेश का प्रभाव मुख्य रूप से उनके उपन्यासों में देखा जा सकता है। इनके उपन्यासों का प्रमुख विषय अभिशप्त मानवीय जीवन और नारी की आर्थिक स्थिति रहा है। इसके अतिरिक्त सामाजिक जीवन में व्याप्त विषमता एवं विसंगतियों, यौन विकृतियों, दाम्पत्य जीवन के बदलते प्रतिमान, नारी की आर्थिक विषमता आदि समस्याएँ मणि मधुकर के केन्द्र में रही हैं। मणि मधुकर के उपन्यास 'पत्तों की बिरादरी' में निर्धनता की नियति पिसते लोगों की चीत्कार का वर्णन है। नारी अपनी आर्थिक समस्याओं से निपटने हेतु सामाजिक बेड़ियों को काटकर पुरुष के समान मजदूरी करती हैं। सुवटी सड़कों पर पत्थर तोड़ती है, वही सुरखी उन पत्थरों को बिछाती है। पुष्पाबाई कैम्प चलाकर जीवन–निर्वाह करती है।

'मेरी स्त्रियाँ' उपन्यास में सामाजिक परिस्थितियों से उपजी विडम्बना की मार्मिक अभिव्यक्ति की गई है। इस उपन्यास में मणि मधुकर ने लेखक के माध्यम से अकेलेपन को अभिव्यक्ति दी है। लेखक जब नीरा और जीनत के सम्पर्क में आता है तो अपने अकेलेपन को सघन रूप में महसूस करता है। नये संबंध बना लेने के बावजूद भी उसका अजनबीपन बढ़ता जाता है। इस उपन्यास के नारी पात्र भी स्वयं को सामाजिक दायित्वों से मुक्त रखते हैं। मणि मधुकर ने अपने उपन्यासों एवं कहानियों में सामाजिक जीवन की विषमताओं का चित्रांकन किया है। स्वतन्त्रता के पश्चात् भारतीय नारी की स्थिति में बहुत परिवर्तन हुआ। स्त्री शिक्षा ने नारी की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को बहुत प्रभावित किया। सामाजिक दायित्वों के ठीक से निर्वहन न कर पाने के कारण स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों में भी तनाव उत्पन्न होने लगा। बदलते जीवन–मूल्यों और उनसे उत्पन्न समस्याओं ने सामाजिक व्यवस्था को प्रभावित किया। इन्हीं सामाजिक विषमताओं को मणि मधुकर ने कहानियों में उभारा है।

कथा साहित्य की भाँति ही मणि मधुकर की कविताओं में बदलते सामाजिक परिवेश की विषमताओं का चित्रण पर्याप्त रूप से किया गया है। मध्यवर्ग की कुंठा, निराशा, विद्रोह, अवसाद को कवि ने सिर्फ देखा ही नहीं है अपितु भोगा भी है। इसलिए कवि कहता है –

'मैदान में आओ और देखो

कि मैदान कितना बड़ा है
कितना बड़ा है आदमी का विषाद।"[22]

इस प्रकार मणि मधुकर के साहित्य का अध्ययन करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि समसामयिक जीवन का उनके साहित्य पर गहरा प्रभाव रहा है।

मणि मधुकर पर अन्य रचनाकारों का प्रभाव

मणि मधुकर की रचनाओं का अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि वे अपने रचनाकाल में अपने पूर्ववर्ती एवं सहयोगी साहित्यकारों से अत्यधिक प्रभावित रहे हैं। उनकी रचनाओं में अन्य रचनाकारों का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। इसके अतिरिक्त स्वातन्त्र्योत्तरकालीन साहित्यिक प्रवृत्तियों का इनकी रचनाओं में स्पष्टतः प्रभाव देखा जा सकता है।

आधुनिकता की प्रवृत्ति को मणि मधुकर की रचनाओं में देखा जा सकता है। नाटक, काव्य, उपन्यास आदि विधाओं में इन्होंने रूढ़ियों एवं परम्पराओं को तोड़कर नई मान्यताओं की स्थापना की है। एक कवि के रूप में मणि मधुकर नवीनता के लिए एक क्रान्ति का आह्वान करते हैं –

"शुरू करो नयी गत शुरू करो अपने
बाजुओं की
ताकत को समेट कर रखो।"[23]

आधुनिकता के इस सन्दर्भ में मणि मधुकर नीत्शे, फ्रायड और मार्क्स से प्रभावित नजर आते हैं। फ्रायड के मनोविश्लेषणवाद का प्रभाव मणि मधुकर की रचनाओं में देखा जा सकता है। यौन कुण्ठाओं का खुला चित्रण इनके उपन्यासों में मुख्य रूप से किया गया है। इनके उपन्यासों में नर–नारी समागम, पर पुरुषों की अनुरक्ति या उनकी काम–कुण्ठाओं को अभिव्यक्त करने के पर्याप्त अवसर मिले हैं। 'मेरी स्त्रियाँ' में नीरा नामक स्त्री द्वारा नग्नावस्था में घूमना उनकी यौन–विकृति का संकेत करता है।

फ्रायड के अतिरिक्त मणि मधुकर मार्क्स से भी प्रभावित रहे हैं। मार्क्स मानवीय स्वतन्त्रता तथा वर्गहीन समाज की स्थापना करना चाहता था। मणि

मधुकर की रचनाओं में वर्गवैषम्य के विरुद्ध तीव्र आक्रोश दिखाई देता है। पूँजीपतियों के शोषण के विरोध में उन्होंने जो क्रान्ति का आह्वान किया है वह मार्क्स से ही प्रभावित है –

"कमजोर मत बनो
उस दीवार से लड़ो
जो हमें अलग करती है
पर अकेले नहीं
तुम्हारी वापसी आंधी की वापसी है।"[24]

मणि मधुकर के साहित्य सृजन पर समकालीन साहित्य एवं साहित्यकारों का बहुत प्रभाव रहा है। इस युग के सभी साहित्यकारों ने सामाजिक यथार्थ को पहचाना। मणि मधुकर के समकालीनों में मोहन राकेश, कमलेश्वर, मुद्राराक्षस, निर्मल वर्मा, उषा प्रियंवदा, यादवेन्द्र शर्मा चन्द्र, श्रीलाल शुक्ल, राजेन्द्र अवस्थी, नागार्जुन, फणीश्वरनाथ रेणु, राजेन्द्र यादव, यशपाल, हजारीप्रसाद द्विवेदी इत्यादि कथाकार प्रमुख हैं। उपर्युक्त कथाकारों की कृतियों में जीवन की विषमता, विसंगति, मूल्यों का विघटन, अकेलापन, संत्रास, शोषण यौन चित्रण, युद्धोपरांत विषमताओं का बहुत ही प्रभावी और यथार्थ चित्रण किया गया है। मणि मधुकर के कथा साहित्य पर इन कथाकारों की रचनात्मक प्रवृत्तियों की छाप अंकित है। मणि मधुकर ने 'सफेद मेमने' उपन्यास में अभिशप्त मानवीय जीवन चेतना को उजागर किया है। इस कृति में रेगिस्तान के मनहूसियत भरे जीवन की ओर संकेत किया है।

कमलेश्वर का 'तीसरा आदमी', मोहन राकेश का 'अंधेरे बंद कमरे', निर्मल वर्मा का 'वे दिन', उषा प्रियंवदा का 'पचपन खंभे लाल दीवारें' उपन्यासों में नारी की विभिन्न परिस्थितियों का चित्रण किया गया है। पूंजीपतियों द्वारा नारी जाति पर किये गये अत्याचार और नारी की विवशता का चित्रण तत्कालीन उपन्यासों की प्रमुख प्रवृत्ति रही है। मणि मधुकर के उपन्यास 'पत्तों की बिरादरी' में भी नारी के शारीरिक एवं मानसिक शोषण का चित्रण किया गया है। मणि मधुकर की कहानियों के कथ्य में यौन विकृतियां, मध्यवर्गीय विसंगतियां, विडम्बनाएँ, सामाजिक जीवन की विडम्बनाएँ इत्यादि प्रधान विशेषताएँ हैं।

एक कथाकार के रूप में जितना समकालीन सृजन का प्रभाव मणि मधुकर

पर पड़ा, उतना ही अपने समकालीन कवियों से भी वे प्रभावित हुए। स्वतन्त्रता के पश्चात् की परिस्थितियों के कारण युवा वर्ग ने जो अनुभव किया, उसकी अभिव्यक्ति ही नयी कविता है। अज्ञेय, नेमिचंद, प्रभाकर माचवे, कैलाश वाजपेयी, लीलाधर जगूड़ी, रामदरश मिश्र, नंदकिशोर आचार्य नयी कविता के मुख्य स्तम्भ माने जा सकते हैं। मणि मधुकर के काव्य में इनका प्रभाव देखा जा सकता है।

मणि मधुकर के काव्य में आम आदमी से संसिक्ति, प्राचीन रूढ़ियों का विरोध, नवीन मूल्यबोध, जीवन की विसंगतियों का चित्रण आदि विशेषताएँ तत्कालीन परिवेश और समकालीन कवियों के प्रभाव का ही परिणाम है। मणि मधुकर के काव्य में जिस आदमी को अभिव्यक्ति मिली है, वह शोषित वर्ग का लाचार आदमी है –

"वे अंधे और पंगु और वाचाहीन जो जनतन्त्र का बोध
उठाने वाले दमदार थम्बे हैं
कतई नहीं जानते कि वे क्या हैं और क्यों हैं
उन्हें अपनी हैसियत अपनी ताक की कोई परवाह नहीं
न ही यह मलाल कि
सालों साल वे बेगारी में इस्तेमाल किये जा रहे हैं।[25]

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, नेमिचंद जैन, मोहन–राकेश, धर्मवीर भारती, मुक्तिबोध, भीष्म साहनी, कृष्णा सोबती, ब.ब. कारंत आदि रचनाकारों, मित्रों एवं निर्देशकों से भी मणि मधुकर अत्यंत प्रभावित रहे हैं।

मणि मधुकर और आंचलिकता

यह एक विवादास्पद प्रश्न है कि मणि मधुकर को आंचलिक उपन्यासकार माना जाए अथवा नहीं। आंचलिकता से अभिप्राय है किसी अंचल विशेष को समष्टिगत अर्थों में चित्रित कर देना। आंचलिक उपन्यासों की तीन विशेषताएं हैं – 1. समष्टि चेतना; 2, अंचल का ही नायक होना; 3. स्थानीय भाषा संगत। इस अर्थ में मणि मधुकर आंचलिक उपन्यासकार नहीं ठहरते हैं। मणि मधुकर के उपन्यासों के परिवेश अवश्य मरु अंचल है लेकिन उनकी समस्याएँ अखिल

भारतीय स्तर की हैं। उनकी भाषा प्रेमचंद के नजदीक है। मणि मधुकर के उपन्यासों के केन्द्र में नारी की नियति, आर्थिक विवशताएँ, भ्रष्ट राजनीति, धार्मिक अंधविश्वास, ढोंग–पाखण्ड, जातीय–वैमनस्य आदि समस्याएँ हैं। उपर्युक्त समस्याएँ सिर्फ राजस्थान से संबंध नहीं रखती अपितु समस्त मानव जाति से रखती हैं। मणि मधुकर को केवल ग्राम कथाकार कहना भी उनके प्रति अन्याय होगा; क्योंकि उनके कथा साहित्य का संबंध ग्राम व नगर दोनों से है।

मणि मधुकर की जन्मभूमि तो राजस्थान थी लेकिन कर्मभूमि (साहित्य लेखन कार्य) दिल्ली थी। राजस्थान में जन्म लेने के कारण उनके साहित्य में मातृभूमि से स्नेह झलकता है। इस अर्थ में वे 'मरुभूमि के प्रति अनन्य अनुराग' रखने वाले कथाकार हैं। यही कारण है कि उनकी रचनाओं में मरुभूमि की मिट्टी की सौंधी गंध विद्यमान है। मणि मधुकर के उपन्यासों का परिवेश अवश्य राजस्थान का है। 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में राजस्थान के पश्चिमी छोर के धूल–धूसरित लोगों की यथार्थमय छवियाँ प्रस्तुत की हैं। एक अकाल पीड़ित सहायता शिविर में गरीबों का शोषण तथा दिन–रात फलते–फूलते चंद अवसरवादी लोगों की करतूतों का खुला चिट्ठा इस कृति में अभिव्यक्त हुआ है। नारी की आर्थिक विवशता तथा पुरुष व नारी के अवैध सम्बन्धों का खुला चित्रण भी इसमें हुआ है। इस उपन्यास में वर्णित समस्याएँ सिर्फ राजस्थान की नहीं हैं अपितु सार्वभौमिक हैं। 'सफेद मेमने' एक प्रतीकात्मक उपन्यास है। इस उपन्यास में मनहूसियत भरे जीवन की ओर संकेत किया गया है।

मणि मधुकर को भाषा के आधार पर भी आंचलिक उपन्यासकार नहीं माना जा सकता। उनके द्वारा प्रयोग में लाई जाने वाली भाषा उत्तर भारत में बोली, समझी जाने वाली भाषा है। इनके उपन्यासों में सभी पात्र एक जैसी भाषा बोलते दिखाई देते हैं। मणि मधुकर द्वारा प्रयुक्त गीत भी सरल–सपाट हिंदी में लिखे गये हैं जैसे –

'डाकिया ने डाकिया
खुल गया तेरा जांघिया
जांघिया में जू
आड़ी आई सूं।'[26]

मणि मधुकर का साहित्य परिवेशगत संवेदनाओं की स्पष्ट अभिव्यक्ति है। उनके साहित्य में स्वतन्त्रता के पश्चात् की आस्था–अनास्था, सुख–दुःख, सामाजिक, राजनीतिक, और आर्थिक असफलताओं के फलस्वरूप उपजी मध्यवर्गीय पीड़ाओं, कुण्ठाओं का यथार्थ चित्रण मिलता है। मरुभूमि के प्रति अनन्य अनुराग रखने वाले मणि मधुकर इस यथार्थ के प्रत्यक्षदर्शी ही नहीं रहे अपितु इस यथार्थ को भोगा भी है।

सन्दर्भ सूची

1. मधुमती (पत्रिका) फरवरी, 1982, पृ. 19
2. बलराम के हजारों नाम, पृ. 130
3. घास का घराना, पृ. 80
4. वही, पृ. 37
5. वही, पृ. 49
6. पगफेरो, पृ. 62
7. समकालीन हिन्दी कहानी का परिदृश्य (रघुवीर दयाल), पृ. 79
8. भरतमुनि के बाद, पृ. 187
9. चुपचाप दुःख, पृ. 54
10. मणि मधुकर के साथ महेश आनंद, और देवराज अंकुर की भेंटवार्ता के कुछ अंश, नटरंग 50–52 से साभार।
11. 'सफेद मेमने' उपन्यास के कवर पृष्ठ से उद्धृत इन्द्रनाथ मदान की टिप्पणी
12. मधुमती, (पत्रिका), फरवरी 1982, पृ. 242
13. पत्तों की बिरादरी, पृ. 24
14. वही, पृ. 33
15. वही, पृ. 49
16. मेरी स्त्रियाँ, पृ. 27
17. पत्तों की बिरादरी, पृ. 33
18. वही, पृ. 34
19. मेरी स्त्रियाँ, पृ. 22
20. घास का घराना, पृ. 2–3
21. वही, पृ. 98
22. बलराम के हजारों नाम, पृ. 81
23. घास का घराना, पृ. 6
24. बलराम के हजारों नाम, पृ. 33
25. घास का घराना, पृ. 80
26. सफेद मेमने, पृ. 64

अध्याय – 3

मणि मधुकर के उपन्यास और मारवाड़ का सामाजिक जीवन

i. जातीय वैमनस्य
ii. प्राकृतिक प्रकोप और पलायन की समस्या
iii. धार्मिक अंधविश्वास
iv. नारी की स्थिति
v. सेक्स विसंगति
vi. वेश्या जीवन एवं अन्य समस्याएँ
vii. मानवीय सम्बन्धों की जटिलता और दाम्पत्य जीवन के बदलते प्रतिमान
viii. भ्रष्टाचार
ix. आधारभूत सुविधाओं का अभाव – (शिक्षा, पानी, चिकित्सा, यातायात आदि)

मणि मधुकर के उपन्यास और मारवाड़ का सामाजिक जीवन

स्वातन्त्र्योत्तर भारतीय समाज के यथार्थ और विस्तृत स्वरूप को साठोत्तर हिन्दी उपन्यासों में विस्तार से देखा जा सकता है। पराधीनता से मुक्ति के बाद भी भारतीय समाज आदर्श समाज नहीं बन सका। भारतीय समाज में फैली अनेक विसंगतियाँ देश की प्रगति में बाधक बनती रही हैं। आर्थिक असमानता के कारण वर्ग वैषम्य जैसी समस्या उठ खड़ी हुई है। दोहरे समाज में एक ओर यदि भूखे, जर्जर, बदहाल एवं अभावग्रस्त लोग हैं तो दूसरी ओर साधन सम्पन्न, ऐश्वर्यमय, अधिकार लिप्सा से युक्त, विलासप्रिय और सत्ताप्रिय लोग हैं। निम्न एवं निम्न मध्यवर्ग के संघर्ष एवं उनकी चेतना को भी साठोत्तर उपन्यास रेखांकित करता है। हमारे समाज में व्याप्त उत्पीड़न, शोषण, क्षोभ, कुण्ठा, आर्थिक विषमताओं से जूझते जीवन संघर्ष की यथार्थ एवं मार्मिक अभिव्यक्ति आधुनिक उपन्यासों में परिलक्षित होती है।

मणि मधुकर ने अपनी औपन्यासिक कृतियों में यथार्थपरक जीवन संघर्ष की सशक्त एवं मार्मिक अभिव्यक्ति की है। अपनी प्रखर भाषा के द्वारा उन्होंने मानवीय जीवन संघर्ष की वास्तविकताओं को यथावत् रूपायित किया है। आर्थिक विषमताओं से जूझते–पिसते पिछड़े वर्ग, नारी की पराधीनता और उसकी विवशता, प्राकृतिक प्रकोप और पलायन जैसी समस्याओं को इन्होंने कथानक का आधार बनाया है। उनकी औपन्यासिक रचनाएँ सामाजिक–पारिवारिक और मानवीय मूल्यों के विखण्डन को भी चित्रित करती हैं।

जातीय–वैमनस्य

भारत एक ऐसा देश है जहाँ विविध भाषा–भाषी, बहुजातीय एवं बहुधर्मी लोग एक साथ निवास करते हैं। 'विविधता में एकता' जैसी लोकोक्ति इसी को सूचित करती है; लेकिन यह लोकोक्ति आज के असत्य को भी दिग्दर्शित करती हुई प्रतीत होती है। वर्तमान समय में जातिवाद, क्षेत्रवाद, साम्प्रदायिकता, भाषावाद जैसी समस्याओं ने भारतीय एकता को विखंडित कर दिया है। पूँजीवाद के इस

दौर में व्यक्ति–व्यक्ति से, धर्म–धर्म से, जाति–जाति से टकरा रही हैं। आपसी वैमनस्य फैलाने और मानवीयता को भुलाने में आज के राजनेताओं अथवा राजनीतिक सत्ता का भी बहुत बड़ा हाथ है। मुक्तिबोध की ये पंक्तियाँ इसी बात को सूचित करती हैं कि –

"देते हैं हथियार
शासक गरीबों को
पानी नहीं देते।"

मणि मधुकर ने अपने उपन्यासों में जातीय वैमनस्य एवं जातीय अंत को सशक्त अभिव्यक्ति दी है। राजस्थान में जातिवाद सबसे बड़ा विष है। मरु अंचल में जाति का दूसरा नाम 'दूध' है। व्यक्ति का नाम पूछने से पहले वहाँ 'दूध' पूछा जाता है। 'दूध' ही उनकी पद–प्रतिष्ठा, मान–अपमान का सूचक होता है। वहाँ की पंचायतें भी 'दूध' के नाम से ही होती हैं।

राजस्थान में जाट, गुर्जर और राजपूत प्रभुत्वशाली जातियाँ हैं। ये जातियाँ सदैव अपने वर्चस्व की लड़ाई लड़ती रही हैं। बगडावत, गाथा, पावटा का डोलची काण्ड और कुम्हेर काण्ड जातिवाद की प्रमुख लड़ाइयाँ रही हैं। बगडावत संघर्ष गुर्जर और राजपूतों के मध्य हुआ था। यह संघर्ष मुख्य रूप से स्त्री को लेकर हुआ था। पावटा का डोलची काण्ड गुर्जर–मीणाओं के मध्य, कुम्हेर काण्ड जाट और जाटवों के मध्य हुआ था। वर्तमान समय में भी आरक्षण जैसे मुद्दे को लेकर सरकार दो जातियों को आपस में लड़ा रही है। दो जातियों के मध्य विभेदक रेखा खींचकर राजनेता अपनी राजनीति रूपी दुकान कर रहे हैं। राजस्थान में यह कहावत प्रचलित है – 'जाट का बोट जाट को, जाट की बेटी जाट को, जाट की रोटी जाट को'। यह कहावत जातिगत अहं को सच्चे रूप में प्रकट करती है। जातियों के मध्य श्रेष्ठता की लड़ाई है। एक जाति अपनी जाति को दूसरी जाति से श्रेष्ठ मानती है।

मणि मधुकर ने मरु अंचल में व्याप्त जातिवाद को अपने कथासाहित्य में अभिव्यक्त किया है। 'सफेद मेमने' उपन्यास पूर्णतः जातीय वैमनस्य को लेकर लिखा गया उपन्यास है। इस उपन्यास के केन्द्र में गाबासी के जाट और बराऊ के राजपूतों का पुश्तैनी बैर है। दोनों ही जातियों के लोग अपने 'अहं' को सन्तुष्ट

करने के लिए स्त्रियों का अपहरण करते हैं। जातीय वर्चस्व और अस्मिता की लड़ाई के मध्य सामान्य महिलाएँ पीड़ित होती हैं। जातीय बहादुरी औरतों के बल पर ही जगमग होती है। मणि मधुकर लिखते हैं – "गाबासी का तगड़ा जवान भी हाथ पड़ने पर बराऊ की किसी राजपूतणी को पकड़ लाता था और बदला लेने के लिए उसकी 'दुरदसा' करके छोड़ता था। तब तमाम जाट गरब में ऐंठते हुए डोलते थे। कल्पनाओं के जोर पर वे बराऊ की सभी चम्पाकलियों से अपने जिस्मानी रिश्ते जोड़ने लगते थे। दोनों ढाणियों की बहादुरी औरतों के बूते पर जगमग थी।"[1] प्रत्येक जाति और प्रत्येक ढाणी का एक गामरू पहलवान होता है। सन्दो बराऊ ढाणी के राजपूतों का गामरू पहलवान था। उसने गाबासी ढाणी से सुरजा जाटणी का अपहरण करके राजपूतों की शान को दुगुना कर दिया था। पुलिस भी उसके भय से बराऊ का फलसा लांघने की हिम्मत नहीं कर पाती थी। उसकी करतूतों का वर्णन करते हुए मणि मधुकर लिखते हैं – "दशहरे के मेले में सन्दो ने गाबासी के आठ लोगों पर बन्दूक दाग दी। एक जाटणी सुरजा को उड़ाकर बराऊ ले आया। उसने मेले में एक बनिये की तिजोरी भी लूट ली, जिसमें अठारह सौ की कड़क गड्डी थी। ..... राजपूतों की एक गामरू टोली बराऊ के नाकों पर पहरा देती थी और सन्दो अपने चौबारे में निधड़क सोता था। आये दिन गाबासी सन्देश भी भिजवा देता था कि सुरजा उसके मन भा गई है। गाबासी के जाटों का रोम रोम उबलने लगा था।"[2] सुरजा जाटणी को सन्दो ने अपने चौबारे में डालकर राजपूतों की खोखली इज्जत को चौगुना कर दिया था। इस तरह उनका अहं सन्तुष्ट हो गया और वे गाबासी के जाटों की खिल्ली उड़ाने का माद्दा भी रखने लग गये।

सुरजा के साथ राजपूतों ने अपनी अमानवीयता और क्रूरता का परिचय दिया। राजपूत तो सुरजा को रौंदने, कुचलने और पीसने की क्रूर आकांक्षाओं से युक्त थे। इसी क्रूरता ने सुरजा को सफेद मेमना बना दिया था। मणि मधुकर लिखते हैं – "सुरजा फक पड़ गयीं निष्प्रभ। जैसे मेमने की भाँति उसे छीलकर रख दिया गया हो। हाथों की फूली हुई नसें देखने लगी। हत्बुद्धि ! वहाँ भी गुदनों की पत्तियाँ थीं। गुच्छल और नोंकदार। अचानक कूल्हों के बीच टीस उठने लगी। चाम चिर गई थी, लहूलुहान हो गयी थी, पर अब तक सुरजा उस हिस्से के प्रति अवहेलना अपनाये हुए थी।"[3]

समाज में व्याप्त विभिन्न समस्याओं में से अस्पृश्यता या छुआछूत भी एक प्रमुख समस्या है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 17 के अनुसार अस्पृश्यता का अंत कर दिया। इसके बावजूद भी यह समस्या मरु अंचल में व्याप्त है। मारवाड में अस्पृश्यता केवल हिन्दू समाज में ही नहीं अपितु मुस्लिम समाज में भी प्रचलित है। शूद्र एवं अवर्ण जातियों का समाज में कोई स्थान नहीं होता। उनके मोहल्लों के नाम भी जाति के आधार पर रखे जाते हैं। इतना ही नहीं बल्कि पानी भरने के स्थान (कुआँ, हैंडपम्प इत्यादि) भी जाति के आधार पर नियत किये गये हैं। मणि मधुकर ने 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में अस्पृश्यता या छुआछूत जैसी समस्या का अंकन किया है। अकाल की भयावह स्थिति में जुगनी एक जमींदार के यहाँ रहकर मजदूरी करती है। उसे बाड़ी में काम करने को मिलता है। कई दिनों के बाद जमींदार को जुगनी की जाति भाँवी के बारे में पता चला। जमींदार उसकी जाति को सुनकर आक्रोश से भर उठा और उसने जुगनी को आग में धकेल दिया। जुगनी कहती है – "एक रोज उसकी घर वाली ने मेरी जात पूछी। मैंने कहा – भाँवी हूँ। वह बिगड़ गयी, बकने लगी – तुने पहले क्यों नहीं बताया, खसम खाणी। तूने हमारा धरम भरस्ट कर दिया। जब जम्मेदार को मालूम पड़ा तो उसने अपने चाकरों से बोल दिया, फेंक दो राँड को आग में। बस उन्होंने फूस जलाकर मुझे उसमें धकेल दिया। कई बार धकेला और निकाला।"[9] लेकिन जमींदार के क्रूर अत्याचार से जुगनी बच जाती है। मणि मधुकर ने जातिवाद, छुआछूत या अस्पृश्यता जैसी समस्याओं से निजात पाने हेतु नवजागरण का सन्देश भी दिया है –

"कमजोर मत बनो
उस दीवार से लड़ो
जो हमें अलग करती है
पर अकेले नहीं
तुम्हारी वापसी आँधी की वापसी है।"[10]

प्राकृतिक प्रकोप और पलायन की समस्या

मरुस्थल के अन्तहीन विस्तार के कारण राजस्थान की जलवायु शुष्क रहती है। शुष्क जलवायु के कारण वहाँ पर वर्षा न के बराबर होती है। इसी कारण मरु अंचल के लोगों को सूखे एवं अकाल की भयावहता का सामना करना पड़ता है। अकाल के समय वहाँ का जीवन निरर्थक और शून्य बन जाता है। 'नाज है तो कल है' लोकोक्ति भी अकाल की भयावह स्थिति को रूपायित करती है। मणि मधुकर ने अपने उपन्यासों में राजस्थान के प्राकृतिक प्रकोपों से प्रभावित जन–जीवन का जीवन्त बिम्बांकन किया है। 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास ऐसे शुष्क जीवन का खुला दस्तावेज प्रस्तुत करता है।

अकाल के कारण इन्सानों के साथ–साथ पशुओं को भी दुर्गति और भयावह पीड़ा से गुजरना होता है। पेट की ज्वाला देश और काल की सीमा को तोड़ देती है। अकाल पड़ने पर मरुस्थल के लोग हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में कोई अंतर नहीं करते हैं। 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में बछराज कहता है कि भूखे आदमी का कोई मुल्क नहीं होता है। उसे जहाँ भी दो टूक मिलेंगे वह वहीं चला जाएगा। शुबो जब पाकिस्तान को छोड़कर हिन्दुस्तान आता है तो उसे अकाल सहायता कैम्पों में नहीं रखा जाता है। पुष्पाबाई कहती है कि – "यहाँ कौन खरचा देगा इनका ? फिर पाकिस्तान वालों का इधर क्या लेना–देना ? मार–मार कर निकाल बाहर करो ऐसे लोगों को।"[11] यह सत्य है कि भूखे व्यक्ति की न कोई जाति है न धर्म और प्रदेश ही। लेकिन यह विभाजन व्यक्ति की अमानुषिक प्रवृत्ति का गुण है। शुबो के दिल और दिमाग में जाति, धर्म और देश को लेकर कोई अन्तर्विरोध नहीं है। वह हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के विभाजन को न्यायसंगत नहीं मानता है। उसे यह भी मालूम नहीं है कि पाकिस्तान और हिन्दुस्तान की सीमा कहाँ से शुरू होकर, कहाँ खत्म होती है। शुबो मुल्क के मुद्दे को लेकर पुष्पाबाई से कहता है कि – "फालतू का लफड़ा खड़ा मत करो, पुष्पाबाई ! किसी माँ के यार ने पखेस्तान बना दिया, किसी ने ईंदस्तान। सिरफिरे स्याले। उनके बनाने से होता क्या है ? मुझे तो उन्होंने नहीं बनाया ? तुम्हें भी नहीं। सो, हमें मुलुकों में बाँटकर अलग करने वाले वो घसियारे कौन होते हैं ?"[12]

मणि मधुकर के ज़ेहन में देश–विभाजन को लेकर गहरी टीस थी। यह

टीस ही उनके साहित्य में प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से दिखाई देती है। देश विभाजन और 1947 के दंगों को लेकर तमस, झूठा–सच जैसे उपन्यास लिखे गये। मणि मधुकर ने भी 'सफेद मेमने' उपन्यास में पूर्वावलोकन शैली में 1947 के दंगों का संक्षिप्त विवरण दे दिया है। 1947 के क्रूर दंगों के बारे में बन्ना को उसकी भाभी बताती है – "जिन्होंने बन्ना के माँ–बाप और भाई को सदा के लिए मिटा दिया था। किस तरह से बाप की आँखें फोड़ दी गयीं, पेट में खंजर भौंककर माँस निकाला गया, किस तरह से भाई की चमड़ी को उबलते हुए आलू की तरह छीला गया, बोटी–बोटी काटकर फेंक दी गयी, कैसे आठ–नौ जनों ने माँ की नंगी देह को रौंदा, स्तनों की घुंडिया उतार ली और कूल्हों के बीच में मिरची का चूरा भर दिया।"[13] देश की सीमाएँ सदैव क्रूरता और बर्बरता से आरोपित होती हैं। इन्हीं की धज्जियाँ शुबो उड़ाता है।

मणि मधुकर ने अकाल की बदहाल स्थिति से जूझ रहे लोगों की पीड़ा का जीवन्त उद्‌घाटन किया है। अकाल से निपटने हेतु शुबो अपने माता–पिता के साथ हिन्दुस्तान आता है। शुबो के कैम्प में पहुँचने से पूर्व ही माता–पिता काल के ग्रास बन जाते हैं। रोटी और पानी की मंजिल तक पहुँचने के लिए उन्हें लम्बा रास्ता तय करना था। लेकिन तपती बालू और भूख–प्यास के कारण मरुस्थल के अनंत विस्तार में शुबो की माँ ने प्राण गँवा दिये। अन्ततः उसने रेत में माथा टिका दिया। शुबो के पिता कहने लगे कि "शुबो ..... यह तो माटी हो गयी अब। इसको कभी चेत नहीं आयेगा। छोड़ दो यहीं छोड़ दो इसे और ... चलो।"[14] शुबो की माँ अपनी अन्तिम इच्छा भी पूरी नहीं कर सकी। उसकी अन्तिम इच्छा थी – "मरने से पहले बस एक बार ताजा सिंकी हुई रोटी का सुवाद चख लेना चाहती हूँ। यही ..... यही एक आखिरी इच्छ्या रह गयी है अब तो।"[15] अन्तिम साध लेकर शुबो की माँ अकाल मृत्यु को प्राप्त हो जाती है। शुबो की माँ अगर भूख से त्रस्त थी तो उनके पिता प्यास से। उसने अपने पिता के लिए मुरचिया की जड़े खोदकर निकाली। उन जड़ों में गीलापन जरूर था। उसने अपने बाऊ की जीभ पर रखकर पानी की तरावट देनी चाही, लेकिन नियति को कुछ और ही मंजूर था। आँखों में उन्माद लेकर, चौड़े वक्ष पर माथा टेककर शुबो रोने लगता है। अंत में शुबो कहता है कि – "कहीं एक टीले पर उसने अपनी माँ को छोड़ा था, दूसरे टीले पर उसने अपने बाऊ को छोड़ दिया ... उसी तरह अंगारे गिराती हुई धूप

में।"[16] मणि मधुकर ने अपनी भाषा के माध्यम से अकाल की भयावह स्थिति का जीवंत चित्रण किया है। 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास के शीर्षक का औचित्य भी अकाल की दुरावस्था की जीवंतता को रूपायित करता है। मणि मधुकर लिखते हैं कि – "दरख्त एक ढाणी है, एक गाँव है और पत्ते उसके बाशिन्दे होते हैं। साथ बोलते हुए, एक सा जीवन जीते हुए ..... वे एक ही बिरादरी के अनेक लोग। लेकिन ऋतुओं की मार से जब पेड़ उजड़ने लगता है तो पत्ते सूख–सूखकर गिरने और बिखरने लगते हैं। अपने गाँव–घर को छोड़कर दुःख–दैन्य के बोझ को ढोते हुए, वे पत्ते ..... जाने कहाँ–कहाँ तक रेलों में बहते–उड़ते चले जाते हैं। .... यही है पत्तों की अपनी बिरादरी।"[17] इस उपन्यास के सभी पात्र प्राकृतिक प्रकोप (अकाल) के कारण पलायन करते हैं।

अकाल एवं सूखे से निपटने हेतु भारत सरकार कैम्प लगाती है जिसमें अकाल पीड़ितों के लिए अनाज–पानी की व्यवस्था की जाती है। ग्यारसीलाल, पुष्पाबाई और बछराज कैम्प के प्रमुख कार्यकर्त्ता हैं। सहायता कैम्पों में काम के बदले अनाज की व्यवस्था थी। मजदूरी के रूप में उन्हें मिलता था – दोनों जून के लिए प्रत्येक को डेढ़ सेर आटा, एक प्याज, मिरच–लूण और तीन डबरे पानी। अपनी सहूलियत के अनुरूप लोग उन कैम्पों में काम करते थे।

मणि मधुकर ने 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में सहायता कैम्पों में व्याप्त अनैतिकता को उजागर किया है। शुबो को पेट की धधकती ज्वाला शान्त करने हेतु कैम्प में अवैध तरीके से प्रवेश मिलता है। ग्यारसीलाल कैम्प में उसी को प्रवेश देता है जिसके साथ जवान लुगाई हो। कैम्प में अपनी पेट की आग को शान्त करने हेतु स्त्रियाँ अपने जिस्म तक का सौदा कर लेती है। ग्यारसीलाल नित्य शराब, कबाब के साथ कैम्प की एक स्त्री को अपने साथ रखता है। वह औरतों के जिस्म का नित्य स्वाद चखता है। ग्यारसीलाल शक्ति बल पर भी स्त्रियों की इज्जत लूटता है। वह अचली से उसकी लड़की जुगनी के बारे में कहता है – "बोल देना छोकरी से, इसी बखत आ जाये। हीले हवाले करे तो चेता देना, शाम से पहले–पहले कैम्प छोड़ना होगा। बाहर जाके भूखी भटकती फिरेगी तो सारा जोबन झाग हो जायेगा।"[18] पेट की ज्वाला और बेटी की इज्जत को ध्यान में रखते हुए स्वयं अचली ही ग्यारसीलाल की गोद में सो जाती है। अचली सोचती है कि – "इस तरह बार–बार ढहते और मरते जीवन निकल गया सारा, अचली

सन्दो अपने जातीय अहं को सन्तुष्ट करने हेतु वह सुरजा को हलाल करना चाहता है। सुरजा कहती है – "सन्दो रोज अपने दोस्त ले आता है। मुझ पर चढ़ाई करने के लिए। वह सोचता है, इससे मेरा नुकसान होगा। मैं हलाल हो जाऊँगी।"[4] सुरजा भी बेवाक काठी वाली जाटणी है। उसमें भी जातीय अहं विद्यमान है। वह कहती है – "वह मेरी आँखों में आँसू देखना चाहता है। मैं जाट की जाई हूँ, समझे ! रोएगी मेरी जूती। मुझ में सामरथ है, दस मरद एक छँट झेल सकती हूँ। सिसकारी तक नहीं निकालूँगी।"[5] बल प्रयोग द्वारा स्थापित यौन सम्बन्धों की निर्ममता और क्रूरता के कारण सुरजा की संवेदना मर चुकी है। जैसे ही कोई व्यक्ति उसकी झोपड़ी में पैर रखता है वैसे ही वह नाड़ा खोलकर दरी पर लेट जाती है। सुरजा यह समझती है कि इस व्यक्ति का मतलब सिर्फ सेक्स से है। जस्सू जैसे ही उसकी झोपड़ी में जाता है तुरंत सुरजा दरी पर लेट जाती है और लहँगा उठाकर चढ़ जाने को बोलती है। सुरजा के स्वर में खीज और अजीब सी फटकार है। वह कहती है – "तुम भी नसें ढीली करने आए थे ? करना चाहो तो कर लो। मुझे कोई जोर नहीं आएगा। एक जाटणी हजार को पोसने का माद्दा रखती है।"[6]

मणि मधुकर ने किस्सागोई शैली में भी गबासी के जाट और बराऊ के राजपूतों की जातीयता की धज्जियाँ उड़ाई है। बाड़मेर के बनिया को एक बार गाबासी के जाट और बराऊ के राजपूत मिलें। दोनों ने बनिये से रुपये छीनने का निश्चय किया। वे दोनों ही उस बनिये से पूछते हैं कि हम दोनों में कौन भला है और कौन बुरा ? बनिया उनकी चाल समझ गया और खुशामदी अंदाज में बोला – 'ठाकर सा भले, चौधरी सा अच्छे।' अन्त में वह वापिस बाड़मेर आ गया। जब घर आ गया तो बनिया भागकर अन्दर घुस गया। अंत में छत पर चढ़कर बनिया बोलता है – "ठीक है, तुम्हें अगर अच्छे और भले से सन्तोष नहीं है तो सुन लो एक नीच है और दूसरा कमीना।"[7] बनिये ने गाबासी के जाटों की नीचता और बराऊ के राजपूतों के कमीनेपन की बखिया खोलकर रख दी थी; लेकिन जातीय अहं आज भी विद्यमान है। 'पिंजरे में पन्ना' उपन्यास में गाड़िया लुहारों के जातीय अहं को मणि मधुकर ने अभिव्यक्त किया है। बुज्जी रम्या को अपनी जाति गर्व के साथ बताती है। वह कहती है – "गाडुले लवार हैं हम लोग ! बड़े कामकाजी। भोत बहादुर ! आन–बान वाले जानती है तू ? ..... राणा प्रताप का साथ देने वाले।"[8] गाडुले लुहार अपने आपको क्षत्रिय (राजपूत) एवं राणा प्रताप के वंशज मानते हैं।

ने सोचा। लेकिन जुगनी को बचाना है, इस मूत के कीड़े से। और, उसने मूत के कीड़े को कसकर अपने में लपेट लिया।"[19] अचली को इस अंधकारमयी दुनिया में बार–बार दुहा गया है। वह जानती है कि जिन्दा रहने के लिए जिन्दगी में अनेकों बार रुँदना पड़ता है।

ग्यारसीलाल की काम–पिपासा का शिकार कैम्प के प्रत्येक स्त्री को होना पड़ता है। औरतों के मध्य यह अफवाह भी फैली हुई थी कि 'जो औरत उसके तम्बू में आती है उसकी हैसियत बढ़ जाती है। ज्यानकी काकी के साथ भी वह ज्यादती करने से बाज नहीं आता है। उसकी काली करतूतों से प्रतिकार शुबो करता है। शुबो स्त्री जाति की इज्जत करता है। इस प्रतिकार के कारण ही उसे कैम्प से बाहर कर दिया जाता है।

अकाल की भयावह स्थिति में यदि एक ओर सामान्य जन भूख–प्यास से त्रस्त है तो दूसरी ओर विलासितामयी जिन्दगी भी है। 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में विलासितामयी जिन्दगी का प्रतिनिधित्व ग्यारसीलाल और पुष्पाबाई करते हैं। पुष्पाबाई कैम्प की मालकिन है। उसे राजनीति करने का शौक है। वह वेश्या की पुत्री और जैतपाल सिंह की रखैल है। मणि मधुकर लिखते हैं कि – "वही जैतपाल सिंह, उसी की तो रखैल रांड है यह पुष्पाबाई ! एम्मेले बनने के सपने देख रही है चुड़ैल। और वो जैतपाल सिंह बैठा है दिल्ली में रोज सात मनिश्टरों के जांघिये सूंघता है।"[20] वह भादरा से कांग्रेस पार्टी के टिकट हेतु अपने जिस्म तक का सौदा कर लेती है।

पुष्पाबाई एक विलासी औरत है। उसकी जिन्दगी शराब और सैक्स तक सीमित है। बदरूमियां उसका सेवक है जो नित्य ब्रामीतेल से उसकी मालिश करता है। उसकी हकीकत के बारे में बदरूमियां कहता है कि – "मिस्की बोलते हैं उसे मिस्की। बाड़मेर से आती है पुष्पाबाई के लिए। रोज एक बोतली चाहिए उसको। दिन रात पीती है और मस्ताई छाँटती है।"[21] पुष्पाबाई कपड़ों की तरह नित्य पुरुषों को बदलती है। केसर, कस्तूरी और मांजरा करना उसकी जिन्दगी के अभिन्न अंग बन गये हैं। प्राकृतिक प्रकोप की भयावह स्थिति में भी वह ऐय्याश जिन्दगी जीती है। पुष्पाबाई को हकीकत के बारे में मणि मधुकर लिखते हैं कि – "पुष्पाबाई गाने लगी – मोरी अँगिया के निंबुआ न तोड़ो सैंया, न मरोड़ो बैंया .....।

बदरू, बदरू मियाँ ! पुष्पाबाई ने गाते–गाते ताली बजायी, मेरे घुँघरू निकालकर लाओ, बक्शे में से। मैं नाचूँगी, मैं इस मुजरे में नाचूँगी ...।"[22] मणि मधुकर ने अकाल की भयावह स्थिति और विलासितामयी जिन्दगी को मार्मिक ढंग से अभिव्यक्ति दी है।

अकाल की दुरावस्था में सरकार कैम्प में अनाज भेजती है। पुष्पाबाई और ग्यारसीलाल उस अनाज की तस्करी करके मुनाफा कमा लेते हैं। कैम्प में चंद लोगों को उन्होंने भर्ती किया, लेकिन कागजातों में उनकी संख्या भारी थी। इस तरह से वे फर्जी काम करके अनाज बचा लेते थे। बदरू मियाँ इस सत्य के बारे में कहते हैं कि – "आस्ते बात करो आस्ते ! इस नाज को तो पुसपाबाई ने बेच दिया है, उधर वालों के हाथ। ग्यारसीलाल की भी इसमें हिस्सेदारी है। ... सब कैम्पों में यही हो रहा है।"[23] मणि मधुकर ने कैम्प में व्याप्त शोषण के खुले ताण्डव को मार्मिक अभिव्यकित दी है।

'सफेद मेमने' उपन्यास में अभिशप्त मानवीय जीवन को रेखांकित किया है। इसमें रेगिस्तान की मनहूसियत जिन्दगी का चित्रण हुआ है। मणि मधुकर ने इस कृति में नेगिया गाँव के धूलधूसरित स्थिति के माध्यम से अकेलेपन, अजनबीपन और बेगानेपन को व्यक्त किया है। इस उपन्यास में दोहरा पलायन चित्रित हुआ है। उपन्यास के प्रमुख पात्र रामौतार पोस्टमास्टर, जस्सू, रक्खे, भानमल आदि प्रारम्भिक पलायन के बाद नेगिया गाँव में एकत्रित होते हैं। इनके पलायन का कारण पारिवारिक जीवन एवं सामाजिक परिस्थितियाँ प्रमुख हैं; लेकिन ये जीवन से पलायन नहीं करते हैं। उपर्युक्त पात्र अपने घर, परिवार, गाँव, शहर और परिवेश से कटकर मनहूस गाँव नेगिया में रहने लगते हैं। वहाँ के जनजीवन, अकेलेपन, परायेपन का वास्तविक एवं सटीक चित्रण यहाँ किया गया है। प्राकृतिक प्रकोप के कारण उक्त उपन्यास के सभी पात्र पुनः पलायन करने को विवश हो जाते हैं। अकाल की भयावह स्थिति का चित्रण मणि मधुकर इस प्रकार करते हैं कि – "एक कठिन समय आया, अकाल का। भूख, प्यास और न सुनी न जानी बीमारियों का ढाणियों का वह पूरा 'देश' उजड़ गया। रेगिस्तान के जीव–जिनावर अपने छप्पर और बाड़े छोड़कर मौत और दो मुल्कों के बीच कहीं भटकने लगे। रक्खे मर गया, उसी अनंत प्यास में तड़प–तड़पकर, जैसे उसका बाप मरा था। डॉक्टर ने मवेशियों के कच्चे–पक्के माँस पर कुछ वक्त निकाला पर

अंत में उसे भी भुखमरी ने घेरकर पींच दिया।"[24] सन्दो और बन्ना ने पाकिस्तान जाकर इस्लाम कबूल कर लिया। रामौतार ने गजसिंहपुर में जाकर नौकर छोड़ दी और कोसानी लौट गया। जस्सू ने नेगिया से निकलते ही भागमभाग की जिन्दगी अपना ली। अंत में जस्सू ने नक्सलियों के साथ जेल भी काटी। सुरजा ने डकैती का पेशा अपना लिया था। इस तरह यह उपन्यास दोहरे पलायन और भगौड़ों की कथा को मार्मिक ढंग से अभिव्यक्त करता है।

धार्मिक अंधविश्वास

मारवाड़ समाज में धार्मिक अंधविश्वास आज भी विद्यमान हैं। स्थानीय लोगों का विश्वास ज्योतिषियों की भविष्यवाणी, जोगियों के चमत्कार, जादू–टोना, झाड़–फूंक, तन्त्र–मंत्र, शकुन–अपशकुन आदि में अपेक्षा से ज्यादा ही है। सांप, बिच्छू आदि जहरीले कीटों का जहर मंत्रों को उच्चारित करके उतारा जाता है। सन्तान प्राप्ति हेतु अथवा साध को पूरी करने हेतु स्त्रियाँ या पुरुष गले में तान्त्रिकों या लोक देवताओं के ताबीज बांधते हैं। पीलिया, टायफायड, गठिया, कनपेड जैसी बीमारियों के इलाज के लिए झाड़–फूंक करवाना आम–बात है। मणि मधुकर ने अपने उपन्यास साहित्य में इन्हीं धार्मिक अंधविश्वासों को सशक्त अभिव्यक्ति दी है।

बलि की प्रथा मारवाड़ी समाज खासकर राजपूत जाति में आज भी प्रचलित है। कठिन कार्य की सिद्धि हेतु ये लोग अपने इष्ट के लिए पशु या नर की बलि देते हैं। 'सफेद मेमने' उपन्यास के प्रमुख पात्र सन्दो को 'भैरुंजी' का इष्ट है। वह अपने इष्ट को खुश करने के लिए नर की बलि देता है। सुरजा जैसी जाटणी को वह शायद भैरुंजी के बल पर उठा के लाया था। इसी कारण वह प्रत्येक कार्य की सिद्धि का श्रेय भैरुंजी को देता है। वह जस्सू से कहता है कि भैरुंजी ने सपने में आकर मुझ से आदमी की बलि मांगी थी। जस्सू के सवाल का उत्तर देते हुए सन्दो कहता है – "मुझे भैरुंजी का इष्ट है और इसी के परताप से सैकड़ों बार मौत की खाई में जाते–जाते बचा हूँ। भैरुंजी ने नर की बलि मांगी और मैंने दे दी ..... इस आदमी को मैं बड़ी मुश्किल से पटाकर यहाँ तक लाया। ... इसको भी सुरजा की पट्टी लगायी और दो दिन तक उसके साथ मजे करवाये।

फिर गर्दन से उड़ा दिया।"[25] सन्दो भक्तिभाव से सामान्यजन का रक्त भैरुंजी पर चढ़ा देता है।

मरु अंचल में यह अंधविश्वास व्याप्त है कि तालाब की खुदाई के लिए पहले मनुष्य की बलि देना आवश्यक है। अकाल सहायतार्थ कैम्प में तलाब खुदाई के कार्य प्रारम्भ करने से पहले ग्यारसीलाल और पुष्पाबाई नर बलि का प्रबन्ध करते हैं। बलि न देने पर सारे काम चौपट हो जाने का भय गयारसीलाल के मन में है। पुष्पाबाई का आया हुआ स्वप्न भी नर की बलि की माँग करता है। वह कहती है – "एक काला भैंसा था। जरूर वो सनीचर का रहा होगा। आदमी की बोली में बोल रहा था। मुझे अपने सींगों पर उठाकर वह तल्लाव की तरफ ले गया। बोला पुसपाबाई ..... मैं तुम्हें यहीं जिन्दा गाडूंगा।"[26] रावता इस स्वप्न को तार्किक ढंग से पुष्ट करते हुए कहता है, – तल्लाव की खुदाई करने से पहले आदमी की बलि देने का कायदा है। जोहड़ की मिट्टी को मिनख का खून न मिले तो वह बदला लेती है, नुकसान पहुँचाती है। ..... हमने कोरम कोर ही खुदाई शुरू कर डाली। कायदे से महूरत सधा नहीं। ..... मुझे तो लगता है यह खोटा सपना तुम्हें आया है, वह भी उसी वजह से .....।"[27] पुष्पाबाई तालाब पर बलि देने हेतु घृणित कुकृत्य का सहारा लेती है। एक अनाथ और गरीब मजदूरनी के बच्चे को रावता ने गुड़ में सम्मल खिला दिया था। वाशिया अफीम के नशे में अचेत हो गया और उसके मुँह पर कपड़ा बाँधकर तालाब के किनारे पर डाल दिया। कैम्प में पुष्पाबाई ने यह अफवाह फैला दी कि वाशिया को जरख ले गया। इस नादान बच्चे की बलि समाज की लोकमांगलिकता और समाज की नैतिकता पर प्रश्न चिह्न लगाती है। नैतिकता और लोकमांगलिकता के ऊपर स्वार्थलिप्सा हावी हो जाती है। वाशिया की अकाल मृत्यु के बाद ममतामयी और वात्सल्यमयी ज्यानकी अर्द्धविक्षिप्त हो जाती है।

'पिंजरे में पन्ना' उपन्यास में गाड़िया लुहारों के जनजीवन को मणि मधुकर ने अत्यंत निकटता से रूपायित किया है। गाडिया लुहार एक घुमक्कड़ जाति है। जब उनका डेरा उखड़ता है तो पहले पड़ाव पर शस्त्र धोये–मांजे जाते हैं। उन पर रोली भी लगाई जाती है। 'आण' के नाम पर नर की बलि तो नहीं दी जाती, लेकिन खून अवश्य हथियारों पर चढ़ाया जाता है। बुज्जी के डेरा पर रात को हथियारों की पूजा होती है। पूजा के समय सभी चिल्लाते हैं – 'आण,

आण, आण।' आण के नाम पर नंदे अपना अँगूठा चीरकर खून देता है। उस खून को आग में व हथियारों पर डाला जाता है। यह 'आण' की प्रथा गाड़िया लुहारों के धार्मिक अंधविश्वास से अभिप्रेरित है।

मारवाड़ समाज में अंध विश्वास पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में अधिक देखने को मिलता है। स्त्रियाँ अपनी मनोकामनाओं को पूर्ण करने हेतु देवी–देवताओं, पीर–ओलिया, ओझाओं के इर्द–गिर्द चक्कर लगाती रहती हैं। वे अपनी साध हेतु गर्दनों में गण्डे–ताबीज पहन लेती हैं। 'पिंजरे में पन्ना' उपन्यास की 'दीवी' अपनी मानता के लिए ओझा से ताबीज लेती है, वह कहती है कि – "साँप की केंचुली है इसमें। मानता मान रखी है मैंने। जब पूरी हो जायेगी तो इसे पिछोला में डाल दूँगी।"[28] यह अंध धार्मिकता का सूचक है।

छोटी से लेकर बड़ी बीमारी के लिए मारवाड़ समाज के लोग डॉक्टर की बजाय किसी ओझा की तलाश करते हैं। टी.वी., गटिया बाय, कनफेड़, पेट का दर्द के लिए पीर–फकीर से झाड़ा लगवाना व ताबीज भरवाना आम बात है। भूत–प्रेतों व 'औपरी–पराई' हवा से बचने के टोने–टोटके किये जाते हैं। शनिवार और मंगलवार जैसे वारों को गाँवों के धार्मिक स्थलों, लोकदेवताओं के पूज्य स्थलों पर भारी मात्रा में भीड़ देखी जा सकती है। लोकदेवताओं के पूज्य स्थलों पर एक पुजारी होता है, जिसका पूजा करना एवं झाड़–फूँक करना ही व्यवसाय होता है। सफेद मेमने के पात्र रणसी गोगाजी का 'निसांणची' है। वह साँप काटने या जहरीला कीड़ा काटने पर जहर खींचता है। वह बारह महीने अपनी बैलगाड़ी पर गोगाजी की ध्वजा फहराते हुए गाँव–गाँव घूमता है। रणसी गोगाजी की कृपा साधकर किसी भी रोग, दुःख–दर्द, व्यथा के निवारण हेतु 'झाडा' देता है। 'बन्ना' के कच्चे गर्भ में दर्द चलने पर रणसी उसे झाड़ा देता है। वह कहता है कि – "खाट पर सीधी लेट जाओ बाई, यह कच्चे गरभ का दर्द है। फिकर की कोई बात नहीं। मैं अभी झाड़ा लगा देता हूँ।"[29] रणसी ने टोपी की नोंक पर से मुरकी उतारी और अंगुली में पहनकर बन्ना के सिरहाने पर बैठ गया। बन्ना के सिर का एक केश तोड़कर उसकी नाभि में रखा और बुदबुदाने लगा। मिनिया तो मुरकी के बुदबुदाने से यह भी बता देता है कि लड़का होगा अथवा लड़की। वह कहता है कि बाऊ ने मुरकी पेट पर रख दी और वह हल्के–हल्के उछल रही थी, इसलिए लड़का ही होगा। ऐसे धार्मिक अंधविश्वास मारवाड़ में बखूबी प्रचलित

हैं। मणि मधुकर लिखते हैं – "बड़ी देर तक रणसी का 'झाड़ा' चलता रहा। आखिर उसने मुरकी उठा ली और उसे टोपी की नोंक में खोंसकर चारपाई की परिक्रमा देने लगा। तीसरे फेरे के बाद उसने रक्खे से कहा, 'रोज सवेरे एक झाडा लगेगा, कोई तकलीफ नहीं होगी।"[30] बीमारियों के लिए झाड–फूँक लगवाना वहाँ आज के उत्तर आधुनिक युग में भी विद्यमान है।

छींक का आना मारवाड़ी समाज में अपशकुन माना जाता है। किसी कार्य को करने से पहले या कहीं जाने से पहले यदि छींक आ जाती है तो उस कार्य को बीच में ही रोक दिया जाता है। छींक अशुभ का प्रतीक है। बिल्ली के द्वारा रास्ता काट देना भी अमांगलिक है। 'सफेद मेमने' की प्रमुख पात्र जंतरी के द्वारा छींकने पर रणसी गुस्से में हो जाता है। रणसी उसे बदजात और गयी–गुजरी औरत समझता है। रणसी कहता है कि – "हरामजादी, क्या हो गया है तुम्हें। जब तब बातचीत के बीच में छींक देती है। कित्ता भारी अपशकुन है। ..... यह तुम क्या कर रही हो बदजात। फिर उसने रामौतार की तरफ ग्लानि से देखा – 'माफ करना बाबूसा बड़ी गयी–गुजरी औरत है ये।"[31] निरन्तर आई छींकों के कारण रणसी क्रोधित हो जाता है और उस क्रोध को जंतरी की पिटाई के माध्यम से शांत करता है।

अनिश्चित भविष्य को जानने के लिए प्रत्येक व्यक्ति उत्सुक होता है। भविष्य को बताने के लिए पोथे–पण्डित हस्तरेखा देखते हैं अथवा राशिफल। कैम्प की मालिक पुष्पाबाई भी ज्योतिष में विश्वास करती है। वह कहती है कि – "मैं बच्ची थी, तब एक जोतसी मेरी माँ के पास आया था। उसने कहा था, तेरी लड़की राज करेगी, बहुत सुख में रहेगी, अच्छे–अच्छे मरदों को भोगेगी, लेकिन इनको सनीचर का खतरा बना रहेगा।"[32] ग्रह–नक्षत्रों के कुप्रभाव को भी पण्डित या ज्योतिषी सुप्रभाव में बदल देते हैं। यह केवल ढोंग और पाखण्ड है। इसी पाखण्ड के सहारे वे अपना जीवकोपार्जन करते हैं।

प्राकृतिक प्रकोप की अग्र सूचना भी मारवाड़ के लोग प्राप्त कर लेते हैं। 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास का पात्र वाशिया सात रंगीन पत्थरों से प्राकृतिक प्रकोप का सगुन लेता है। वह कहता है कि – "जब विपदा आये पत्थरों की बात सुनो। वह उन्हें हवा में उछाल रहा था। पत्थर अक्कास की बानी पकड़ लेते हैं

और भविस काल का हाल हवाल बता देते हैं।"[33] यह विद्या उसने गोदारी से सीखी थी। मणि मधुकर ने अपने उपन्यास साहित्य में समाज में प्रचलित धार्मिक अंधविश्वासों यथा झाड़–फूँक, जादू–टोना, नर बलि की प्रथा, ज्योतिष आदि को सशक्त अभिव्यक्ति दी है। यह सच केवल मणि मधुकर के समय का ही नहीं बल्कि आज का भी है।

नारी की स्थिति

भारतीय समाज में नारी को 'देवी' ! मा ! सहचरी' कहकर उसके आदर्शवादी रुझान की ओर संकेत किया गया है। जयशंकर प्रसाद 'कामायनी' में लिखते हैं कि – 'नारी तुम केवल श्रद्धा हो/विश्वास रजत नग पगतल में/पीयूष स्रोत सी बहा करो/जीवन के सुन्दर समतल में।' पद्मिनी, पन्नाधाय जैसी महिलाएँ भी राजस्थान की गौरवमयी संस्कृति की ओर संकेत करती हैं। लेकिन साठोत्तरी उपन्यासों में थोथी आदर्शवादिता के स्थान पर स्त्री जाति के सच को ठोस यथार्थ के धरातल पर अंकित किया गया है।

मणि मधुकर ने अपने उपन्यास साहित्य में नारी की पराधीनता को उजागर किया है। नारी की पराधीनता के दो कारण है – आर्थिक विवशता और सामाजिक मर्यादाएँ। 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में नारी का शोषण आर्थिक विवशता के ही कारण होता है। पेट की ज्वाला और अकाल की भयावह स्थिति के कारण महिलाएँ अपने जिस्म तक का सौदा कर लेती हैं। ग्यारसीलाल स्त्री जाति का देहशोषण करने से बाज नहीं आता है। वह कैम्प में सिर्फ औरतों को भर्ती करता है। अचली, जुगनी, सुवटी, ज्यानकी जैसी महिलाएँ अपने पेट की खातिर सतीत्व को लुटा देती हैं। जमुनी कहती है कि – "जानती हूँ कि जिन्दा रहने के लिए जिन्दगी को किस तरह रौंदना पड़ता है।"[34] ग्यारसीलाल सिर्फ अकेला समाज का विषैला कीड़ा नहीं है अपितु उस जैसों की पलटन खड़ी हुई है। अचली इस विषैले कीड़े से अपनी बेटी को बचाना चाहती है। इसलिए स्वयं ही ग्यारसीलाल के देहशोषण का शिकार हो जाती है। वह कहती है कि, "इसी तरह बार–बार ढहते और मरते जीवन निकल गया सारा, अचली ने सोचा। लेकिन जुगनी को बचाना है इस मूत के कीड़े से।"[35] अधिकांश महिलाएँ आर्थिक रूप

से विवश होकर अपने देह का शोषण कराती है, वही कुछ महिलाएँ अपनी महत्वाकाँक्षाओं की पूर्ति हेतु जिस्म का सौदा करती हैं। सुवटी और पुष्पाबाई में राजनीति करने की सनक चढ़ी हुई है। इसी कारण सुवटी व पुष्पाबाई ग्यारसीलाल, रावता, हरलो, जैतपाल सिंह की रखैल बनी हुई हैं। बदरू मियाँ कहता है कि – "वही जैतपाल सिंघ, उसी की तो रखैल राँड है यह पुसपाबाई ! एम्मेले बनने के सपने देख रही है, चुड़ैल ! और वो जैतपाल सिंघ बैठा है दिल्ली में, नेम से रोज सात मनिश्टरों के जाँघिये सूँघता है।"[36]

स्त्रियाँ केवल आर्थिक रूप से ही नहीं बल्कि सामाजिक रूप से भी वे पराधीन हैं। महादेवी वर्मा ने नारी जाति को जन्म से अभिशप्त और जीवन से संतप्त बताया है। पिता और पति के घर में उसका स्थान मुख्य न होकर गौण ही होता है। सामाजिक बन्दिशें ही उसकी पराधीनता की सूचक हैं। 'पिंजरे में पन्ना' उपन्यास की नायिका सदैव पिंजरे में ही कैद रहती है। यह पिंजरा सामाजिक मर्यादाओं रूपी तार से बना हुआ है। इस पिंजरे को तोड़ने पर ही पन्ना को संखिया खिलाकर हत्या कर दी जाती है। पन्ना सुरध्यान ख्याल मण्डली की नायिका और चेतराव जाट की प्रेमिका थी। इस पन्ना को चेतराव जाट ने प्रेम से प्राप्त किया था। लेकिन रिछपाल ठाकुर इसी पन्ना को शक्ति के आधार पर प्राप्त करना चाहता था। शक्ति और प्रेम के आधार पर यह उपन्यास 'पद्मावत' (जायसी) से मेल खाता है। रिछपाल ठाकुर आधुनिक अलाउद्दीन खिलजी है। प्रेम को प्रेम से अवश्य प्राप्त किया जा सकता है लेकिन शक्ति से नहीं। अंत में असफल रिछपाल पन्ना को संखिया खिलवा देता है। पन्ना की मृत्यु के बाद रिछपाल उसकी हवेली में आग लगवाकर सिर्फ उसकी राख को प्राप्त कर पाता है। जायसी की यह उक्ति यहाँ भी चरित्रार्थ होती है कि 'छार उठाइ लीन्ही इक मूँठी, दीन्ही उड़ाए पिरथमी झूँठी।' मणि मधुकर ने इसी सामाजिक मर्यादा रूपी पिंजरे के बारे में लिखा है – "पन्ना तो बार–बार जन्म लेती है .....। लेकिन हर बार उसके लिए एक पिंजरा तैयार होता है।"[37] सामाजिक मर्यादाओं, रूढ़ियों, समाज में प्रचलित विसंगतियों को तोड़ने का कार्य केवल मीरा ही कर सकती है। मीरा स्पष्ट कहती हैं – 'लोक लाज कुल कानि जगत् की। दई बहाय जस पानी।'

जातिवाद और साम्प्रदायिकता जैसी सामाजिक समस्याओं के मध्य में नारी जाति का शोषण होता है। सफेद मेमने की सुरजा का शारीरिक शोषण जातीय वैमनस्य के कारण ही होता है। हजारों बार उसके साथ किये गये संभोग के कारण उसकी संवेदना मर चुकी है। सन्दो अपने जातीय स्वाभिमान के लिए उसकी आँखों में आँसू देखना चाहता है। सुरजा कहती है कि – "हाँ वह मेरी आँखों में आँसू देखना चाहता है। मैं जाट की जाई हूँ, समझे ! रोएगी मेरी जूती।"[37] जातीय अहं या जातीय वैमनस्य के बीच भी स्त्री–जाति की इज्जत के साथ खिलवाड़ किया जाता है। बेवस और लाचार स्त्री–जाति के बल पर ही व्यक्ति के स्वाभिमान की जगमगाहट होती है।

सैक्स विसंगति

यौन संबंधों की कडुवाहट की प्रवृत्ति साठोत्तरी उपन्यासों में मिलती है। 'नदी के द्वीप', 'एक पति के नोट्स', नदी और सीपियाँ, बेघर, मछली मरी हुई, मित्रो मरजानी, सफेद मेमने, पत्तों की बिरादरी आदि उपन्यासों में दाम्पत्य सम्बन्धों में आये तनाव या अवैध सम्बन्धों के मूल में कोई न कोई सैक्स सम्बन्धी विसंगति है। साहचर्य, प्रेम, रोमांस आदि विवाह के बाद भी आवश्यक होते हैं। इनकी अनुपस्थिति में दाम्पत्य जीवन में कडुवाहट आ जाती है। काम पिपासा की तृप्ति के लिए भी अवैध सम्बन्ध समाज में बनते हैं। आर्थिक विवशता भी सैक्स विसंगति को जन्म देती है।

'नदी के द्वीप' उपन्यास की रेखा अपने पति के साथ दाम्पत्य जीवन में तालमेल नहीं बिठा पाती है क्योंकि वह स्त्रीत्व की दरकार को समझ नहीं पाता है। यही कारण है कि रेखा तुलियन झील के किनारे भुवन के साथ संभोग करने के बाद काम पिपासा शांत करती है। 'बेघर' में परमजीत संजीवनी से प्रथम सहवास के बाद जान पाता है कि यह प्रथम सहवास नहीं है। उसने कौमार्य की पहचान चीख पुकार और खून से जोड़ रखी थी। ऐसा कुछ न पाकर अपने नैतिक और पारिवारिक संस्कारों की वजह से वह पत्नी को शंका की दृष्टि से देखता है। अंत में सम्बन्ध विच्छेद हो जाते हैं। 'मछली मरी हुई' में पति की नपुंसकता सम्बन्धों में तनाव पैदा करती है। कल्याणी के बाद संभोग करने में असफल होने

के बाद निर्मल जब भी किसी नारी से सम्पर्क करता है, संभोग से पूर्व ही स्खलित हो जाता है।

मणि मधुकर ने अपने उपन्यासों में सैक्स विसंगति (अवैध सम्बन्ध, यौन कुण्ठाएँ) को खुले रूप में चित्रित किया है। उनके उपन्यासों में नर–नारी समागम, परपुरुष की अनुरक्ति, यौन कुण्ठाओं के पीछे नारी की कमजोरी, नारी की महत्त्वाकांक्षाओं को उद्‌घाटित किया है। मणि मधुकर ने अपने उपन्यासों में सैक्स का जो खुला चित्रण किया है उसके बारे में डॉ. दुर्गाप्रसाद अग्रवाल लिखते हैं – "लेखक ने परिवेश की जड़ता को तोड़ने के लिए सैक्स का प्रयोग किया है, सातवें दशक की यह प्रमुख साहित्यिक प्रवृत्ति रही और 1971 में प्रकाशित 'सफेद मेमने' पर इस प्रवृत्ति की गहरी छाप हमें अप्रीतिकर भले ही लगे, अस्वाभाविक नहीं कही जा सकती।"[38] उन्होंने सैक्स को सामाजिक विसंगति के रूप में ही चित्रित नहीं किया, बल्कि सैक्स को एक भूख माना है। इन्द्रनाथ मदान लिखते हैं कि – "इस उपन्यास (सफेद मेमने) में संभोग कभी खुले टीले पर है तो कभी झोपड़ी में है, 'मरी हुई औरत से संभोग' (एक कविता शीर्षक) वाले दौर में यौन केन्द्रित रचनाओं की भीड़ में एक रचना सफेद मेमने भी है, बल्कि उघड़ी आंचलिक अभिधाओं और भैंस प्रकरण के कारण इस वर्ग में शीर्षस्थ है।"[39] उनके पात्रों में रोटी से ज्यादा भूख सैक्स की है।

'सफेद मेमने' उपन्यास में बन्ना अपने पति रामौतार से यौन सुख प्राप्त नहीं कर पाती है; क्योंकि वह अधेड़ उम्र का व्यक्ति था। उनके बीच अनमेल विवाह सैक्स विसंगति का कारण बनता है। अपनी शारीरिक भूख को शांत करने के लिए वह सन्दो के साथ अवैध सम्बन्ध स्थापित कर लेती है। वह सन्दो के सम्पर्क में आने के बाद कहती है कि – "उसको लगा, पहली बार उसे पुरुष ने छुआ है।, उसके कौमार्य की जड़ता को अपने अनंत बल से भंग किया है।"[40] बन्ना और सन्दो के सम्बन्ध यौन विकृति से प्रारम्भ होकर परिणय सूत्र में समाप्त हो जाते हैं। नारी अथवा पुरुष की विवशता अथवा सहमति भी यौन विकृति के जिम्मेदार हैं। प्रारम्भ में जो जस्सू स्त्री जाति का सम्मान करता था वही आगे चलकर जन्तरी के साथ बलात् काम पिपाशा शांत करता है। सन्दो जातीय दुश्मनी के कारण सुरजा के साथ कुकृत्य करता है। इसी प्रकार डॉ. भानमल द्वारा भैंस

के साथ किया गया संभोग यौन कुण्ठा का ही परिणाम है। रक्खे जाट के अवैध सम्बन्ध गोली ठकुरानी से थे। निरन्तर बने अवैध सम्बन्धों के कारण 'जारज सन्तान' जैसी समस्या सामने आयी है। सन्दो राजपूत रक्खे जाट की सन्तान है। बन्ना के गर्भ में सन्दो का बच्चा पल रहा है। रक्खे जाट कहता है कि – "सन्दो का बच्चा ! यानी रक्खे की तीसरी पीढ़ी जन्म लेने वाली है। उसके रोम–रोम में सनसनाहट दौड़ गयी ..... जिस व्यक्ति ने न कभी ब्याह किया, न गृहस्थी जमायी, न घर का कोई दन्द–फन्द किया – जिन्दगी भर अकेला और अपने में सिमटा–सिमटा रहा, लेकिन फिर भी उसका वंश खत्म नहीं हुआ है।"[41]

'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में सैक्स या तो निर्धनता अथवा मजबूरीवश चित्रित हुआ है या फिर विलास और सुख ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए। इस उपन्यास में नारी अपनी आर्थिक विवशताओं के लिए अपने जिस्म का सौदा करती है। जुगनी कहती है – "मानती हूँ कि जिन्दा रहने के लिए जिन्दगी को किस तरह रौंदना पड़ता है।" कैम्प की मालिक पुष्पाबाई अपनी महत्त्वाकांक्षाओं, राजलिप्सा, विलास और ऐश्वर्य के लिए जैतपाल सिंह, रावता और ग्यारसीलाल से अनैतिक सम्बन्ध स्थापित करती है। अचली और सुवटी भी यौन सुख प्राप्ति के लिए पुरुषों के हाथों में ढह जाती है।

मणि मधुकर के उपन्यासों में प्रेम के स्थान पर वासना की अवधारणा मिलती है। यह वासना अर्थजनित है। इसी वासना की पूर्ति या यौन सुख की प्राप्ति हेतु महिलाएँ पुरुषों को और पुरुष महिलाओं को अपने हाथ का खिलौना समझते हैं। मणि मधुकर के उपन्यासों के पात्र एक दूसरे को शारीरिक भूख शांत करने के लिए कपड़ों की भाँति बदलते हैं। 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास की महिला पात्र – 'अचली, जुगनी, सुवटी, ज्यानकी, पुष्पाबाई नित्य नये पुरुषों के साथ रात बिताती हैं। उन्होंने यौन सुख को ही सबसे बड़ा सुख मान लिया है। 'पिंजरे में पन्ना' उपन्यास की प्रमुख पात्र सैन्ना रम्या से कहती है कि – "मर्दों की सिट्टी–पिट्टी भुला देना आता है मुझे। मुल्की चौथा मोट्यार है मेरा, बियाह किया हुआ। वैसे तो कौन गिनती रखे ? तन को जब मौज आती है तो अपने–आप खोज लेता है किसी को।"[42]

'मेरी स्त्रियाँ' उपन्यास में स्वच्छन्द और विकृत यौन प्रवृत्ति का चित्रण

किया है। अपनी काम पिपासा की तृप्ति और यौन सुख के लिए कृति की स्त्रियाँ कोई न कोई साधन ढूँढ लेती हैं। जीनत और नीरा का जीवन सिर्फ धन और यौन सुख तक सिमट गया है। जीनत बूढ़े नवाब से शादी करती है और दौलत के बल पर यौन तृप्ति के साधन जुटा लेती है। इसी प्रकार नीरा का लेखक के घर जाकर मैक्सी उतार कर फेंक देना और हॉस्टल के पार्क में नग्नावस्था में घूमना उसकी यौन विकृति को उद्‌घाटित करता है। जीनत भी लेखक को अपने बंगले पर हवस का शिकार बना लेती है। वह कहती भी है कि – क्या किया मैंने कुछ भी तो नहीं। थोड़ी देर की पलंग मस्ती और एक डुबकी। जिन्दगी और है ही क्या ? पछताओ मत । जो मिलता है वह ले लो। जो कर सकते हो कर लो।"[43] जीनत अपने आधुनिक व्यक्तित्व एवं विकृत यौनकांक्षा की छाप हर जगह छोड़ती है। बार में बैठकर बीयर पीना और अपने शरीर को पुरुषों के हाथों लुटाना ही मानों उसने अत्याधुनिक नारी का जीवन मान लिया है।

वेश्या एवं अन्य समस्याएँ

वेश्या समस्या, अनमेल विवाह, स्त्री की खरीद–फरोख्त, विधवा समस्या समाज की केवल समस्याएँ ही नही बल्कि कुप्रथाएँ भी हैं। इन समस्याओं को जन्म देने एवं उन्हें आज तक बनाये रखने में सामंतवादी पुरुष सत्ता की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। वर्चस्ववादी पुरुष समाज अपने पुरुषत्व के मोह में नारी की सत्ता को भुला बैठा है। जयशंकर प्रसाद कहते हैं –

'तुम भूल गये पुरुषत्व मोह में
कुछ सत्ता है नारी की।'

उपर्युक्त समस्याओं को लेकर औपनिवेशिक भारत के साहित्यकारों ने भी अपनी कलम चलाई। आज भी ये समस्याएँ यथावत् बनी हुई हैं। स्वाधीन भारत के साहित्यकारों ने भी समाज के इन्हीं घृणित पक्षों को अपने साहित्य का विषय बनाया है।

सामाजिक पराधीनता और आर्थिक विवशता, पुरुष की वर्चस्ववादी सत्ता, प्रेम का अभाव और वासना का अतिरेक ही स्त्री जाति को वेश्या बनने के

लिए मजबूर कर देता है। समाज जिन नारियों को उपेक्षा या तिरस्कार की नजर से देखता है, वे नारियाँ लाचार होकर वेश्यावृत्ति को अपना लेती हैं। 'सेवासदन' उपन्यास के प्रमुख पात्र कुँवर अनिरुद्ध सिंह कहते हैं कि – "जिस समाज में अत्याचारी जमींदार, रिश्वती राज्य कर्मचारी, अन्यायी महाजन, स्वार्थी बन्धु आदर और सम्मान के पात्र हों, वहाँ दालमण्डी क्यों न आबाद हो ? हराम का धन हरामकारी के सिवा और कहाँ जा सकता है ? जिस दिन नजराना, रिश्वत और सूद दर सूद का अंत होगा, उसी दिन दालमण्डी उजड़ जायेगी।"[44] 'सफेद मेमने' उपन्यास में अभिव्यक्त वेश्या समस्या आर्थिक परिस्थितियों की देन है। लेकिन 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास की पुष्पाबाई राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा और वासनात्मक सुख के लिए वेश्या बनने को उतारू होती हैं। पुष्पाबाई एक उच्च श्रेणी की वेश्या है जिसके सम्बन्ध बड़े–बड़े राजनेताओं से हैं। जैतपाल सिंह की मृत्यु पर वह कहती है कि – "और मैं कौन सी सत्ती सुहागन हूँ कि जैतपाल सिंग के पीछे चूड़ियाँ फोड़ डालूँगी।"[45] पारिवारिक एवं सामाजिक कारणों से पतित महिलाएँ भी वेश्या जीवन जीने को बाध्य हो जाती हैं। पुरुषों की भोगवादी मानसिकता के कारण स्त्रियाँ अपने आपको किसी न किसी स्तर पर रण्डी और सभी बुराइयों की जड़ मानती हैं।

मारवाड़ समाज में अनमेल विवाह की समस्या आज भी प्रचलित है। 'सफेद मेमने' उपन्यास की बन्ना का विवाह अधेड़ उम्र के रामौतार के साथ होता है। अनमेल विवाह भी सैक्स विसंगति का एक प्रमुख हेतु बनकर उभरता है। बन्ना की शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति रामौतार नहीं कर पाता है। यौन अतृप्ति ही बन्ना के सम्बन्धों को सन्दो के साथ जोड़ देती है। यह चरम परिणति में पहुँच कर परिणय का रूप धारण कर लेती है। बन्ना अंत में कहती है कि – "बन्ना को लगा, पहली बार उसे पुरुष ने छुआ है उसके कौमार्य की जड़ता को अपने अनंत बल से भंग किया है।"[46] पारिवारिक विघटन, दाम्पत्य जीवन में कडुवाहट के पीछे अनमेल विवाह भी एक कारण है।

पुरुष सत्तात्मक समाज में स्त्री जाति की खरीद–फरोख्त का एकाधिकार भी अपने हाथ में ही ले रखा है। एक पिता अपनी पुत्री पर और एक पति अपनी पत्नी पर अपना ही प्रभुत्व समझता है। इसी कारण उन्हें बेचने का अधिकार भी रखता है। आर्थिक विवशता के चलते एक पिता अपनी बेटी को अथवा एक पति

अपनी पत्नी को बेच देता है। मणि मधुकर ने इस समस्या को अपने कथासाहित्य में सशक्त अभिव्यक्ति दी है। ऐसे यथार्थमय संघर्ष की अभिव्यक्ति 'मरी हुई पहचान' कहानी में मिलती है। अपनी औरत को बेचकर नौबतराम अत्यंत दुखी है – तुम्हें पता है मैंने यह फैसला कितनी कठिनाई से लिया था। आठ बरस तक जमीन को सुखा कर इन्दर राजा ने बरसात दी और मेरा खेत बिना बीज बुवाई को तरसता रहा। जो हल की मूठ पर हाथ न रखे, वह हलधर ही क्या ? मैंने हीरालाल महाजन के पाँव पकड़े, चिमना चौधरी के आगे नाक रगड़ी, पिरमू सिंह के रखले में रात भर गिड़गिड़ाता रहा पर कोई टस से मस नहीं हुआ। तब मेरे सामने इसके सिवा और क्या चारा था। कि अपनी लुगाई को बेच दूँ।"[47] पूँजीपति वर्ग ऐसी औरतों को खरीद कर उन्हें वेश्यावृत्ति की ओर उन्मुख कर देते हैं। उच्च वर्ग के लिए स्त्री एक पैसा कमाने वाली वस्तु भी है। 'सफेद मेमने' उपन्यास की सुरजा को थानेदार (दरोगा) देहशोषण करने के बाद बेच देता है। स्त्री जाति की खरीद–फरोख्त पुरुष के सामंतवादी रवैये को उजागर करता है। वर्चस्ववादी पुरुष के लिए स्त्री स्त्रीत्व से युक्त स्त्री नहीं अपितु भोग से युक्त स्त्री है।

मानवीय सम्बन्धों की जटिलता और बदलते दाम्पत्य जीवन के प्रतिमान

भौतिकवादी युग में समाज के आपसी सम्बन्धों में अर्थ की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। अर्थ मानवता के ऊपर हावी दिखाई देता है। पारिवारिक विघटन या दाम्पत्य कडुवाहट के बीच अर्थ भी एक हेतु के रूप में सामने आया है। अर्थ प्रधान संस्कृति ने समाज में व्याप्त त्याग, सेवा, प्रेम, कर्त्तव्यपरायण आदि भावनाओं को छिन्न–भिन्न किया है। सम्बन्धों में पनपता भौतिकतावादी दृष्टिकोण आज के महानगरीय परिवारों का सबसे बड़ा अभिशाप सिद्ध हो रहा है।

समाज में व्याप्त व्यक्तिगत अवसरवादिता ने पारस्परिक मानवीय सम्बन्धों में बिखराव पैदा कर किया है। शिक्षा के प्रसार और आधुनिकता की अंधी दौड़ के चलते आज पारस्परिक सम्बन्धों में आत्मीयता का भाव नहीं रह गया है। विश्वास अविश्वास में बदल गया है। व्यक्ति जीवन को निजी सत्ता मानकर अपने आपको पूर्ण मानने लगा है। भौतिकवादी प्रवृत्ति, परम्पराओं को तोड़ने की छटपटाहट,

पारस्परिक सामंजस्य का अभाव, महानगरीय संस्कृति का बढ़ता प्रभाव, व्यक्तिगत अवसरवादिता, निजी सत्ता का स्वीकार, नैतिक मूल्यों का पतन इत्यादि कारणों से मानवीय सम्बन्धों में जटिलताएँ एवं विसंगतियाँ आने लगी हैं।

मणि मधुकर ने अपने उपन्यासों में टूटते–बिखरते मानवीय सम्बन्धों का विशद चित्रण किया है। 'सफेद मेमने' उपन्यास में टूटते बिखरते परिवारों के पीछे भौतिकवादी दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत उपन्यास के कथ्य सन्दर्भों का यह कटु यथार्थ आज की पूँजीवादी सभ्यता का अवश्यंभावी परिणाम है। प्रस्तुत कृति में जस्सू नाम का डाकिया अपने पारिवारिक सम्बन्धों को तोड़कर नेगिया जैसी रेतीली, मनहूसियत ढाणी में रहता है। पारिवारिक झगड़े के बाद जस्सू का परिवार जैसी संस्था से मोहभंग हो जाता है। भूख, प्यास सहता हुआ जस्सू अंत में पोस्टमैन बन जाता है। वह सुरजा से अपने परिवार के सम्बन्ध में कहता है – "लेकिन ... उनके साथ निभती नहीं है। अलग रहने में आजादी है।" डॉ. भानमल का जीवन भी निरन्तर भटकाव और भगोड़ेपन से युक्त है। जस्सू, भानमल और रक्खे तीनों ही पारिवारिक जीवन को बोझ समझते हैं। भानमल अपने परिवार से मुक्त होकर घर, गृहस्थ और परिवार जैसी समस्याओं से निजात पा लेता है। अकेलापन ही उसका जीवन है। सन्दो भी अपने माता–पिता को छोड़कर गाबासी में दुर्भिक्ष नर की तरह घूमता है तथा विवश नारियों के जिस्म के साथ खिलवाड़ करता है। अंत में वह बन्ना के साथ पाकिस्तान चला जाता है।

समीक्ष्य उपन्यास में दाम्पत्य सम्बन्धों के मध्य बिखराव को भी चित्रित किया गया है। रामौतार और बन्ना के बीच पति–पत्नी जैसे सम्बन्ध दिखाई नहीं देते हैं। उनके बीच अजनबीपन, अकेलापन विद्यमान रहता है। बन्ना रामौतार से जितना प्यार करती है उतना ही उसकी मौत से। वह पति को उतना ही महत्त्व देती है जितना कि अपने मुहासों को। वे दोनों अपने दाम्पत्य जीवन को जीते नहीं हैं बल्कि बोझा समझकर ढोते हैं। इसी कारण दोनों दाम्पत्य जीवन रूपी बन्धन से मुक्ति चाहते हैं।

'मेरी स्त्रियाँ' उपन्यास में पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित समस्याओं को विस्तृत रूप से चित्रित किया है। इस कृति की नारी अपने पिता को पुरातन पीढ़ी का समझकर उससे अपने सम्बन्ध तोड़ लेती है। जब उसके पिता चमड़े के

बिजनसमैन के साथ उसकी शादी की बात करता है तो उसे वह एक सौदा मानती है। वह कहती है – "मैं अपने बाप को और होने वाले पति को सबक सिखाकर छोड़ूँगी। वह यहाँ तक कहती है – "मैं अपने को भ्रष्ट कर डालूँगी। मैं अपने देह को फाड़कर चिंदी–चिंदी कर दूँगी। तब माई फादर एण्ड वुडवी हसबैण्ड मुझे देखेंगे और सिर पीट लेंगे। व्यक्तिगत तौर पर यही होगा मेरा रिवोल्यूशन।"[49] नीरा का यह विद्रोह निजी सत्ता को महत्त्व देता है। आज की युवा पीढ़ी जीवन को व्यक्तिगत सम्पत्ति मानती है। इस सम्पत्ति पर परिवार वालों का कोई हक नहीं है। यही कारण है कि अंत में नीरा गुण्डा मल्लिकनाथ रेड्डी के गिरोह में चली जाती है और अंग प्रदर्शन के लिए केबरे डांसर बन जाती है। जीनत भी अपनी उच्च आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए बूढ़े नवाब से निकाह कर लेती है। पति–पत्नी के सम्बन्धों का उसके लिए कोई महत्त्व नहीं है। अपने रिश्तों की गरिमा को भूलकर वह पर पुरुष से अनैतिक सम्बन्ध बना लेती है।

'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में आर्थिक दबाव के कारण मानवीय सम्बन्धों में बदलाव आया है। प्रस्तुत कृति में पेट की ज्वाला ने पारिवारिक संवेदनाओं, आपसी सम्बन्धों का गला घोंट दिया है। 'मेरी स्त्रियाँ' और 'सफेद मेमने' जैसे उपन्यासों में रिश्तों की गरीबी का बेवाक चित्रण हुआ है। मुख्य रूप से भौतिकवादी प्रवृत्ति, अत्याधुनिकता और अकेलेपन की विसंगतियों के कारण ही सम्बन्धों में बिखराव आया है। इन विसंगतियों का सर्वाधिक प्रभाव दाम्पत्य सम्बन्धों पर पड़ा है। 'मेरी स्त्रियाँ' उपन्यास में इसी प्रकार की दाम्पत्य कटुताओं का चित्रण हुआ है। 'अन्ना' अपने पति को तलाक देकर मदनलाल से सम्बन्ध जोड़ लेती है। 'पत्तों की बिरादरी' में अचली दयालु बछराज को छोड़कर दीने और पुलिसमैन के पास चली जाती है। अंत में पुनः बछराज के पास चली आती है। वस्तुतः वैवाहिक जीवन ही विडम्बनात्मक बन गया है। मणि मधुकर ने वैवाहिक जीवन के तनावपूर्ण संघर्षों और उनके दुखद परिणामों को व्यापक फलक पर चित्रित किया है।

आज के युवा को विवाह संस्था से गहरी चिढ़ है। वैवाहिक जीवन के मायने सही अर्थों में बदल गये हैं। पति–पत्नी के बीच आत्मीय रिश्ते नहीं रहे हैं। न ही वे एक–दूसरे के प्रति जवाबदेही है। मणि मधुकर ने आधुनिक परिवेश और

नैतिक पतन के फलस्वरूप दाम्पत्य जीवन में आ रहे बिखराव का स्पष्ट चित्रण किया है।

भ्रष्टाचार

मणि मधुकर ने राजनीतिक एवं प्रशासनिक भ्रष्टाचार को अपनी विभिन्न रचनाओं में यत्र–तत्र प्रस्तुत किया है। राजनीतिक अवसरवादिता, चाटुकारिता, उच्चाकांक्षाएँ, स्वार्थ लोभ ही व्यक्ति को असामाजिक, अनैतिक और भ्रष्ट बनाता है। आज की राजनीति सच्चे अर्थों में सत्ता हथियाने तक सीमित हो गयी है। राजनेताओं ने देशप्रेम अथवा राष्ट्रप्रेम के गीत गाना छोड़कर, सत्ता प्रेम के गीत गाना प्रारम्भ कर दिया है। शासन सत्ता को प्राप्त करना अथवा उससे चिपके रहना ही आधुनिक राजनेता की विशेषताएँ हैं। राजलिप्सा और उच्च–आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए लोगों ने सम्बन्धों की पवित्रता को ही भंग कर दिया है –

"भगतजन जानते हैं कि मलिस्टर मोशाय के
एक खपसूरत पोती है
जो आजकल ऐमेले के गुपत चुटकलों
पर हंसती और रोती है।"[50]

'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में मणि मधुकर ने राजनीतिक स्थिति को ठोस यथार्थ के धरातल पर रूपायित किया है। एक नारी राजनीति में प्रवेश पाने के लिए किस प्रकार राजनेताओं की कठपुतली बन जाती है, इसका बेबाक उदाहरण यह उपन्यास प्रस्तुत करता है। पुष्पाबाई की उच्चआकांक्षा ही अवसरवादिता का परिणाम है। इसी अवसरवादिता के लिए वह अपने जिस्म का सौदा प्रत्येक राजनेता के साथ करती है। स्त्रीत्व की गरिमा की भूलकर वह एम.एल.ए. बनने के लिए जैतपाल सिंह की रखैल तक बन जाती है। बदरू मियाँ शुबो से कहता है कि – "वही जैतपाल सिंह, उसी की तो रखैल रांड है यह पुसपाबाई। एम्मेले बनने के सपने देख रही है चुड़ैल ! और वो जैतपाल सिंह बैठा है दिल्ली में, नेम से रोज सात मनीश्टरों के जांघिये सूँघता है।"[51] जैतपाल सिंह की मृत्यु के बाद पुष्पाबाई हीरानंद की रखैल बन जाती है। वह कहती है कि – "तो मैं अब उसी

(हीरानंद) को पटाऊँगी। वो तो वैसे भी मुझे खूब मानता है और मैं कौन सी सत्ती सुहागन हूँ कि जैतपाल सिंह के पीछे चूड़ियाँ फोड़ डालूँगी।"[52] पुष्पाबाई के माध्यम से उपन्यासकार ने राजनीति के घिनौने और क्रूर पक्ष को उजागर किया है। नैतिकता और मर्यादा जैसी आदर्शवादिता को पुष्पाबाई राजलिप्सा के लिए बाधा मानती है। इन्हीं सामाजिक मर्यादाओं और नैतिकताओं की धज्जियाँ मणि मधुकर ने उड़ायी हैं। राजलिप्सा या कहें स्वार्थलिप्सा ही व्यक्ति के ऊपर शासन करती है।

'मेरी स्त्रियाँ' उपन्यास में जीनत और नवाब साहब राजनीति के चक्रव्यूह में फँसे हुए हैं। जीनत अपनी महत्त्वाकांक्षाओं के कारण बूढ़े नवाब से शादी कर लेती है। उसके जीवन का उद्देश्य बिस्तर पर विलास भोगना, हुक्म चलाना और राज करना है। इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वह बूढ़े नवाब की बेगम बनती है। लेकिन घटिया राजनीति के परिणामस्वरूप वह डॉक्टर द्वारा जहर का इंजेक्शन देकर नवाब को मरवा देती है। राजनीतिक सत्ता को हथियाने के लिए व्यक्ति किस तरह की घिनौनी हरकत कर सकता है, उसका यथावत् चित्रण इस उपन्यास में हुआ है।

'पिंजरे में पन्ना' उपन्यास में राजनीतिक एवं प्रशासनिक भ्रष्टाचार का चित्रण किया है। रिछपाल ठाकुर अपनी काली करतूतों, शक्ति, धन और शराब के बल पर चुनाव जीतता है। वह समाज में रहने वाला असामाजिक तत्त्व है। उसके आतंक से जनता त्रस्त है। इसी भय के कारण सामान्य जन उसे वोट देता है। रिछपाल के आदमी गाडुले लुहारों को जबरन रोककर, शराब पिलाकर वोट पाने का प्रयास करते हैं। राजनीतिक शक्ति या प्रशासनिक शक्ति सदैव गरीबों, पददलितों, मजदूरों का ही शारीरिक, आर्थिक, मानसिक अथवा सामाजिक रूप से शोषण करती हैं। समीक्ष्य उपन्यास में पुलिस प्रशासन की अमानुषिक प्रवृत्ति को उजागर किया गया है। पुलिस प्रशासन बुज्जी के पति को हथियार बनाने के झूठे आरोप में गिरफ्तार करके श्मशान घाट तक की यात्रा करा देते हैं। इससे असन्तुष्ट होकर वे बुज्जी की इज्जत भी लूटते हैं। बुज्जी का नंगापन समाज की प्रत्येक स्त्री का नंगापन है। आर्थिक विवशता ही बुज्जी के नंगापन का कारण है। थानेदार की क्रूरता और अमानवीयता अपनी सीमाएँ भी लांघ जाती हैं। वह बुज्जी के गर्भ में भी हथियार ढूँढने की कोशिश करता है। मणि मधुकर लिखते हैं –

"थाणेदार खी खी करके बोला, इस जनानी के पेट में जरूर शस्तर होगा कोई, यह फूला हुआ क्यों है ? माँ ने थूक दिया उसके मुँह पर गरभ पर हाथ रखके बोली – बच्चा है इसमें। मेरा और मेरे धणीका। हम गाडिया लवारों में तो औरतें ही बच्चा जनती हैं तुम लोगों के बच्चे कुतियों की कोख से निकलते होंगे।"[53] आर्थिक तंगी के दौर से गुजरती बुज्जी अपने पति को भी पुलिस हिरासत से मुक्त नहीं करा पाती है। वह कहती है कि – "गिन्नियाँ होती मेरे पास, तो तेरे बाऊ को छुड़ा नहीं लाती ? ..... दो सैंकड़ी रुपैया माँगने के लिए आया था सिपाही। बोला था दे दोगी तो तुम्हारे मरद को छोड़ देंगे। पण ..... मेरे पास तो धेला–पैसा जोड़कर छै रुपये बने।"[54] समाज में व्याप्त कुकृत्यों को मणि मधुकर ने बखूबी चित्रित किया है। मणि मधुकर के उपन्यासों में भ्रष्ट राजनीति, भ्रष्ट प्रशासनिक सत्ता और इसके प्रति तीव्र मोह के कारण होने वाले दुष्परिणामों को स्पष्ट रूप से अंकन मिलता है।

आधारभूत सुविधाओं का अभाव (शिक्षा, पानी, चिकित्सा, यातायात आदि)

भारत की लगभग 70 प्रतिशत जनता गाँवों में निवास करती है। लेकिन आधारभूत सुविधाओं के अभाव में गाँव आदर्श गाँवं नहीं बन सके हैं। अधिकांश गाँवों के हालत पिछड़ेपन के कारण जर्जर हैं। मारवाड़ अंचल भौगोलिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से भी पिछड़ा हुआ है। मारवाड़ क्षेत्र सामाजिक विकास के आधारभूत साधनों शिक्षा, चिकित्सा, यातायात, जल, खाद्य आदि से अभी तक वंचित है। सरकार द्वारा किये गये प्रयास भी उचित ढंग से क्रियान्वित नहीं हो पाये हैं।

मरु अंचल के गाँवों में प्राथमिक एवं मिडिल स्कूल अवश्य खोल दिये गये हैं, लेकिन ये स्कूल आधारभूत सुविधाओं से वंचित हैं। अच्छी बिल्डिंग एवं अच्छे अध्यापकों की वजह से ये विद्यालय नाममात्र के होकर रह गये हैं। मौसमी अव्यवस्थाओं के कारण भी स्कूलों की बीच–बीच में छुट्टी करनी पड़ती है। उच्च शिक्षा के मरु प्रदेश के शिक्षार्थियों को जिला मुख्यालयों पर जाना पड़ता है। उनके लिए शिक्षा व्यक्तित्व विकास नहीं बल्कि रोजगार का पर्याय है। शिक्षा के प्रति वहाँ

के लोगों की गलत समझ है। 'सफेद मेमने' का रणसी कहता है – "मैं तो इससे कहता हूँ, क्या पड़ा है पढ़ाई–भढ़ाई में। कुछ गुन भजन सीख लोगे तो धंधे में लग जाओगे। गोगाजी पीर का ऐसा आसीरवाद है कि भूखे तो मरोगे नहीं।"[55] स्त्री शिक्षा को मरु प्रदेश में सामाजिक मर्यादाओं का उल्लंघन मानते हैं। स्त्री की जिम्मेदारी घर–गृहस्थ की है, इसलिए उनके लिए शिक्षा को एक बोझा माना जाता है। पुरुषों की सामंतवादी दृष्टि भी महिला अशिक्षा से जुड़ा हुआ प्रमुख अवयव है।

शिक्षा व्यवस्था के अलावा चिकित्सा जैसी सुविधाओं के अभाव में भी मरु प्रदेश दरिद्र है। वहाँ तहसील या जिला स्तर पर ही अच्छे अस्पताल मिलते हैं। गाँवों या ढाणियों में सिर्फ डिस्पेन्सरी मिलती है। अच्छी सुविधाओं की अनुपलब्धता के कारण वहाँ चिकित्सक नदारद मिलते हैं। उचित चिकित्सा व्यवस्था का अभाव एवं वैज्ञानिक सोच के अविकसित होने के कारण ही लोग झाड़–फूँक, गंडे–ताबीज, देशी वैद्यों, नीम हकीमों का सहारा लेते हैं। पीलिया, कनफेड़, टायफायड, फोड़ा–फुन्सी, जैसे रोगों के लिए झाड़े लगवाना उचित चिकित्सा व्यवस्था का ही अभाव है। छोटी–छोटी बीमारियों के कारण ही वहाँ के लोगों की असामयिक एवं अल्प अवस्था में ही मृत्यु हो जाती है। 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास के बछराज और 'पिंजरे में पन्ना' की नायिका पन्ना की मृत्यु चिकित्सा सुविधाओं के अभाव के कारण ही होती है।

मरु अंचल पूर्णतः रेतीला है, रेतीले होने के कारण यातायात व्यवस्था जर्जर एवं अव्यवस्थित है। सड़कें भी वहाँ नाममात्र की संख्या में हैं। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के बावजूद भी अधिकांश गाँव या ढाणी इस सुविधा से वंचित है। वहाँ की भौगोलिक परिस्थितियाँ भी रेगिस्तानी ज़हाज ऊँट के ही अनुकूल हैं। सामान का आयात–निर्यात भी वहाँ ऊँटों के माध्यम से ही होता है। भारतीय सेना भी सीमा पर ऊँटों के माध्यम से अपनी यातायात व्यवस्था को सुचारू बनाये हुए है। वर्तमान समय में मरु प्रदेश साधन सम्पन्न नहीं है।

पानी, बिजली एवं खाद्य की समस्या मारवाड़ में आज भी बरकरार है। पीने के लिए जल का अभाव है। 'जल है तो कल है', जब तक नाज है तब तक आज है', 'बिजली बचाओ, पानी बचाओ, सबको पढ़ाओ जैसे सूत्रवाक्य वहाँ की अभावग्रस्त जिन्दगी की हकीकत प्रस्तुत करते हैं। वहाँ की आय का साधन

पशुपालन और खेती है। प्राकृतिक प्रकोप की वजह से वहाँ के लोग त्रस्त रहते हैं। कृषि पूर्णतः वर्षा पर निर्भर है। इन्हीं परिस्थितियों से मुक्ति पाने हेतु वहाँ के लोग पलायन की ओर उन्मुख होते हैं। मणि मधुकर के उपन्यासों में जो पलायन चित्रित हुआ है उसके पीछे प्राकृतिक प्रकोप भी एक कारण रहा है। मारवाड़ क्षेत्र के लोग परिस्थितियों से निजात पाने हेतु, रोजगार की तलाश में शहरों की ओर पलायन करते हैं।

आधारभूत विकास के मामले में प्रत्येक गाँव एक जैसे हैं। अधिकांश गाँव पिछड़े हुए हैं। देश की सम्पूर्ण विकास योजनाएँ शहर एवं राजधानी तक ही सीमित हैं। भारतीय गाँव अपने पिछड़ेपन एवं अज्ञानता के कारण आदर्श एवं आधुनिक नहीं बन पाये हैं। गाँवों के पिछड़ेपन के लिए भारतीय राजनीति एवं योजनाओं की अक्रियान्विति ही जिम्मेदार हैं। इन्दिरा गाँधी महिला योजना, अन्त्योदय योजना, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, जवाहर ग्राम समृद्धि योजना, स्वर्णजयंती ग्राम योजना, राष्ट्रीय पोषाहार मिशन योजना, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना आदि योजनाओं एवं कार्यक्रमों के बावजूद मरु अंचल या कहें भारतीय ग्रामों में कोई खास सुधार नहीं हुआ है। इन योजनाओं की क्रियान्विति के बाद भी भारतीय गाँवों का मूलभूत विकास नहीं हो पाया है।

स्पष्ट है कि मणि मधुकर ने अपने उपन्यास साहित्य में यथार्थपरक जीवन संघर्ष को सशक्त अभिव्यक्ति दी है। उन्होंने गरीब मजदूरों, शोषितों, कृषकों एवं आर्थिक विवशतावश समझौता करने वाले लोगों के जीवन संघर्ष को जीवन्त रूप में चित्रित किया है।

सन्दर्भ सूची

1. सफेद मेमने (उपन्यास), पृ. 65
2. वही, पृ. 26
3. वही, पृ. 63
4. वही, पृ. 61
5. वही, पृ. 61
6. वही, पृ. 61
7. वही, पृ. 75
8. पिंजरे में पन्ना (उपन्यास), पृ. 8
9. पत्तों की बिरादरी (उपन्यास), पृ. 162
10. बलराम के हजारों नाम (काव्य संग्रह), पृ. 33
11. पत्तों की बिरादरी (उपन्यास), पृ. 12
12. वही, पृ. 62
13. सफेद मेमने (उपन्यास), पृ. 87
14. पत्तों की बिरादरी (उपन्यास), पृ. 14
15. वही, पृ. 14
16. वही, पृ. 19
17. वही, पृ. 25
18. वही, पृ. 118
19. वही, पृ. 119
20. वही, पृ. 33
21. वही, पृ. 27
22. वही, पृ. 36
23. वही, पृ. 40
24. सफेद मेमने (उपन्यास), पृ. 158
25. वही, पृ. 79
26. पत्तों की बिरादरी (उपन्यास), पृ. 125
27. वही, पृ. 120
28. पिंजरे में पन्ना (उपन्यास), पृ. 53
29. सफेद मेमने (उपन्यास), पृ. 111
30. वही, पृ. 112
31. वही, पृ. 128

32. पत्तों की बिरादरी (उपन्यास), पृ. 125
33. वही, पृ. 100
34. वही, पृ. 79
35. वही, पृ. 119
36. वही, पृ. 33
37. सफेद मेमने (उपन्यास), पृ. 61
38. मधुमती पत्रिका, फरवरी 1982, पृ. 24
39. वही, पृ. 24
40. सफेद मेमने (उपन्यास), पृ. 134
41. वही, पृ. 123
42. पिंजरे में पन्ना (उपन्यास), पृ. 73
43. मेरी स्त्रियाँ (उपन्यास), सारिका पत्रिका, 16 जून, 1981, पृ. 38
44. सेवासदन (उपन्यास), पृ. 267
45. पत्तों की बिरादरी (उपन्यास), पृ. 83
46. सफेद मेमने (उपन्यास), पृ. 234
47. भरतमुनि के बाद (कहानी संगह), पृ. 187
48. सफेद मेमने (उपन्यास), पृ. 68
49. मेरी स्त्रियाँ (उपन्यास), सारिका पत्रिका, जून, 1982, पृ. 35
50. घास का घराना, (काव्य संग्रह), पृ. 98
51. पत्तों की बिरादरी (उपन्यास), पृ. 33
52. वही, पृ. 83
53. पिंजरे में पन्ना (उपन्यास), पृ. 63
54. वही, पृ. 73
55. सफेद मेमने (उपन्यास), पृ. 114

अध्याय – 4

मणि मधुकर के उपन्यास और मारवाड़ का सांस्कृतिक जीवन

i. रहन–सहन एवं खान–पान
ii. रीति–रिवाज एवं लोकोत्सव
iii. सामासिक संस्कृति
iv. लोकगीत, लोकवाद्य एवं लोकनाट्य
v. लोक की भाषा

मणि मधुकर के उपन्यास और मारवाड़ का सांस्कृतिक जीवन

भारत में विविध सभ्यताओं एवं संस्कृतियों का समुच्चय मिलता है। संस्कृति के अन्तर्गत स्थानीय जनजीवन के आचार–विचार, रहन–सहन, खान–पान, परम्पराएँ, धर्म, अनुष्ठान, भाषा, विधि–निषेध, विश्वास इत्यादि को शुमार किया जाता है। संस्कृति का सम्बन्ध केवल स्थानीय ही नहीं होता बल्कि वर्गगत भी होता है। अभिजात वर्ग की संस्कृति शिष्ट संस्कृति कहलाती है। शिष्ट संस्कृति के लोग बौद्धिक विकास के उच्चतम शिखर पर पहुँचे हुए होते हैं। जनसाधारण की संस्कृति लोकसंस्कृति कहलाती है।

सोफिया बर्न ने लोकसंस्कृति के लिए फोकलोर शब्द का प्रयोग किया है। फोकलोर के विषय को उन्होंने तीन भागों में विभक्त किया है – 1. लोकविश्वास एवं अंधपरम्पराएँ; 2. रीतिरिवाज तथा प्रथाएँ; 3. लोकसाहित्य। वनस्पति जगत, पशु जगत, मानव द्वारा निर्मित वस्तु, परलोक, शकुन–अपशकुन, जादू–टोना आदि लोकविश्वास और परम्परा के अन्तर्गत आते हैं। दूसरी श्रेणी में उद्योग–धन्धे, व्रत–त्योहार, रीति–रिवाज आदि को सम्मिलित किया गया है। लोकगीत, लोककथाएँ, कहावतें, पहेलियाँ आदि तृतीय श्रेणी में अन्तर्भुक्त हैं।

मणि मधुकर के उपन्यासों में लोकजीवन के साथ–साथ वहाँ की परिस्थितियों का भी यथार्थ चित्रण मिलता है। ग्रामीण परिवेश ही उनके उपन्यासों के केन्द्र में है। मणि मधुकर ने मारवाड़ी समाज और उनके रीति–रिवाजों, परिवेश, परिधान, रहन–सहन, आशा–आकांक्षा, लोकोत्सव, संस्कार, लोकविधाओं का उपन्यासों में जीवन्त चित्रण किया है।

मणि मधुकर की रचनाओं का अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि उनकी कृतियों में राजस्थानी जन–जीवन, वहाँ के विविध रंग और बोली सहज रूप में आकर्षित करती दिखाई पड़ती हैं। अपने उपन्यास 'पत्तों की बिरादरी', 'सफेद मेमने' और 'पिंजरे में पन्ना' में उन्होंने राजस्थान की जीवन शैली का अत्यंत सजीव चित्रण किया है। राजस्थानी काव्य–संग्रह 'पगफेरो' में तो सम्पूर्ण राजस्थानी संस्कृति की जीवन्त तस्वीर देखने को मिलती है। ठेठ राजस्थानी भाषा

में लिखी कविताएँ वहाँ के लोकजीवन की मनोरम झाँकी प्रस्तुत करती हैं। इसका कारण मणि मधुकर की मरुभूमि के प्रति निष्ठा और अनुराग की भावना है।

रहन–सहन एवं खान–पान

किसी भी देश या प्रदेश के रहन–सहन अथवा खान–पान को भौगोलिक एवं तत्क्षेत्रीय जलवायु प्रभावित करती है। मरु अंचल का सम्बन्ध राजस्थान के दक्षिण–पश्चिमी जिलों (जैसलमेर, बीकानेर, बाड़मेर) से है। मणि मधुकर ने अपने उपन्यासों के कथानक का आधार भारत–पाक के सीमांत क्षेत्र के मारवाड़ी समाज को बनाया है। मरु अंचल पूर्णतः रेगिस्तानी इलाका है। मणि मधुकर के उपन्यासों में ग्रामीण समाज का यथार्थ अंकन मिलता है। मारवाड़ का इलाका गाँवों एवं ढाणियों के रूप में बसा हुआ है। इन ढाणियों के नाम व्यक्तिपरक होते हैं। 'सफेद मेमने' उपन्यास में नेगिया गाबासी गाँव, बराऊ की ढाणी व्यक्तिपरक नाम है। हरजी की ढाणी, रामो की ढाणी, वैद की ढाणी, इसी तरह के उदाहरण हैं। ढाणी या गाँवों में प्रत्येक जाति के लोग मिलते हैं। कुछ ग्राम इसके अपवाद भी होते हैं जैसे गाबासी पूर्णतः जाटों का गाँव है। प्रत्येक गाँव में प्रत्येक जाति एवं प्रत्येक कार्य करने वाले लोग मिल जाते हैं। मणि मधुकर गाँवों की बसावट के बारे में लिखते हैं – "हर ढाणी में एक घर बढ़ई का, एक मोची का, एक कुम्हार का, एक जुलाहे का, एक राजगीर का ..... जरूर होता है।"[1] गाँवों में आपसी प्रेम व भाईचारा होता है। प्रत्येक गाँव की अपनी ग्रामीण पंचायत भी होती है। ग्राम की अधिकतर समस्याओं का निदान ग्रामीण पंचायतें ही करती हैं। गाँव का बुजुर्ग व्यक्ति ही इसकी अध्यक्षता करता है। ग्रामीण पंचायतों के अलावा जातीय पंचायतें भी होती हैं। मणि मधुकर ने 'पिंजरे में पन्ना' उपन्यास के माध्यम से जातीय पंचायतों की काली करतूतों को उजागर किया है। शादी से पूर्व दीवी के बच्चा हो जाने पर उसे जातीय पंचायतें दाग देती हैं। नंदे भी इसी दाग प्रथा का शिकार हुआ। दीवी कहती है – 'उन्होंने एक ही दफे दागा। यही कायदा है। पचास रुपैये जुरमाना भी किया। नंदे तो नट गया, एक कौड़ी नहीं दूँगा। पण ..... माँ ने उससे छुपाके डंड भर दिया। कुछ और भी देके राजी किया पंचायतियों को बेजात–परजात की बात और है लेकिन अपनी बिरादरी के मुखियों को नाखुस्स नहीं करना चाहिए।'[2]

मारवाड़ में माता–पिता के लिए 'काका', 'काकी', 'भइया', 'दादा', 'दद्दू', 'बाबूजी' जैसे सम्बोधन सूचकों का प्रयोग किया जाता है। बहू के लिए बीदणी, बड़े भाई के लिए दादाभाई, लड़का–लड़की के लिए मोड़ा–मोड़ी का भी प्रयोग किया जाता है। रम्या जब कलकत्ता से मारवाड़ आती है तो चेतराव को काका व नथली को काकी कहकर पुकारती है। मणि मधुकर ने मारवाड़ के ग्रामीण समाज की जीवन स्थितियों एवं रहन–सहन का सजीव चित्रण किया है। रेगिस्तान के खालीपन, सन्नाटे और उजाड़पन में लोग घास–पात की छाजन में निवास करते हैं। चेतराव के घर की यथास्थिति के बारे में मणि मधुकर लिखते हैं – "उनका घर कच्ची ईंटों का मकान। घास पात की छाजन। लिपाई–पुताई साफ सुथरी।"[3]

मणि मधुकर ने अपने उपन्यासों में मारवाड़ के आदरसूचक, सम्मानसूचक, सम्बोधनसूचक, सम्बोधन वाक्यों एवं शब्दों का भरपूर प्रयोग किया है। मरु अंचल में लोकदेवता या लोकदेवियों के नाम ही सम्बोधनसूचक होते हैं। जैसे – जैरामजी, जै गोगाजी, जै तेजाजी, जै पाबूजी, जैनाथ जी की, जै गोपीनाथ जी। आतिथ्य के रूप में वहाँ 'पलक पावणै' बिछाये जाते हैं तथा 'पधारो सा' सम्बोधन के रूप में बोला जाता है। 'पधारो सा' शब्द आगमन के साथ–साथ गमन के लिए भी प्रयुक्त होता है। 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में मणि मधुकर लिखते हैं कि फेरूँ मिलाला, राजी राखै बाबा रामदेव। उपर्युक्त शब्द मिलन बिछुड़न के सूचक हैं। 'हाय बापूजी', 'हाय रामदेव', 'हाय देव जी', 'हाय गोगाजी' आश्चर्यजनक सम्बोधन सूचक शब्द हैं। आतिथ्य के स्वागत में 'पलक पावणै' ही नहीं बिछाये जाते बल्कि उसे भेंट भी दी जाती है। चेतराव रम्या को हिरन की खाल का एक लम्बा बटुआ तोफे के रूप में देता है। मणि मधुकर ने आतिथ्य सत्कार को मारवाड़ी संस्कृति के रूप में चित्रित किया है।

मारवाड के लोगों का पहनावा–ओढ़ावा अन्य प्रदेशों एवं अंचलों से भिन्न है। पुरुष परिधानों में धोती, लम्बा अंगरखा, पगड़ी पहनने का रिवाज है। पगड़ियों की कई शैलियों में – अटपटी, अमरशाही, उदेशाही, खंजरशाही, शिवशाही, विजयशाही और शाहजहानी मुख्य हैं। पगड़ी को चमकीली बनाने के लिए तुर्रे, सरपेच, बालाबन्दी, धुगधुगी, गोसपेच, फतेपेच आदि का प्रयोग होता था। मरुअंचल के वस्त्रों में पगड़ी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। 'पगड़ी की लाज रचना'

गौरव की रक्षा का प्रतीक है। 'पगड़ी को उतार फेंकना' अपमान का सूचक माना जाता है। "अंगरखी" भी तनसुख, दुतई, गाबा, गदर, मिरजई इत्यादि प्रकार की होती हैं। 'पिंजरे में पन्ना' उपन्यास के प्रमुख पात्र चेतराव जाट मरु अंचल के पुरुष पहनावे का प्रतिनिधित्व करता है। वहाँ पुरुष स्त्रियों की भाँति ही आभूषण भी पहनता है। स्त्री परिधानों में साड़ी, ओढ़नी, घाघरा, लंहगा, कुर्ती, कंचुकी का प्रचलन है। वर्तमान समय में पोमचा, लहरिया और चुनरी का भी प्रचलन अधिक हो गया है। कानों में मुरकियां, लोंग, झाले, छैलकड़ी, हाथों में बाजूबन्द, गले में वलेवडा, हाथ में कड़ा तथा अंगुलियों में अँगूठी आदि पुरुषों के आभूषणों में प्रमुख हैं। स्त्री आभूषणों में बगंडी, हथफूल, बोरला, रखड़ी, मरहठी, गोखरू, सिरफूल, बाजूबन्द आदि प्रमुख हैं। मणि मधुकर ने मारवाड़ी स्त्री को सुसज्जित ढंग से चित्रित किया है। बणी–ठणी, सजी–सँवरी सैन्ना के बारे में मणि मधुकर लिखते हैं – गले में तागली, माथे पर दाणों का टीलडा, झुनकीदार नाथड़ी, कानों में लम्बी मोरख्याँ, कलाइयों पर गुदे हुए आम्बा–मोर, उमर चालीस के नजदीक, पर सिंगार पटार में नयी बीनणी की तरह।"[4] मारवाड़ के स्त्री–पुरुषों में गुदना मड़वाने की परम्परा प्रचलित है। 'पिंजरे में पन्ना' उपन्यास के गाडुले लुहारों की स्त्रियाँ भिन्न–भिन्न रूपाकारों में गुदना मँडवाती हैं। छल्ले, छितारा, कझवरी, नैणुदाला, सौक, तीलकड़ा, हाँकलिया इत्यादि गुदना के रूप हैं।

रेत के अथाह और कठिन संसार में पानी की अहमियत है। पानी के अभाव में वहाँ सब कुछ सून है। मारवाड़ के लोग पानी की समस्या से निजात पाने के लिए जीवन भर संघर्ष करते रहते हैं। निरन्तर पड़ते अकाल से वहाँ की स्थिति अत्यधिक भयानक है। मरु अंचल के कठिन संसार में पानी मुश्किल से पीने के लिए उपलब्ध हो पाता है। ऐसी विपरीत परिस्थिति में वहाँ के लोग स्नान के लिए 'लेपा' लगाते हैं। दीवी रम्या से कहती है कि 'पानी तो पीने के लिए मिल जाता है वही रामजी की किरपा है। 'पिंजरे में पन्ना' उपन्यास में मणि मधुकर ने मारवाड़ के लोगों के स्नान के ढंग को चित्रित किया है। दीवी रम्या को स्नान कराने हेतु उबटन बनाती है। सरसों का तेल और तरखोरा मिट्टी से उबटन बन जाती है। उबटन सम्पूर्ण शरीर पर एक साथ लगाना होता है जिसके लिए औरत को नंगा भी होना पड़ता है। रम्या नग्न होने पर संकोच करती है। लेकिन यह नग्नता मर्यादा के विपरीत नहीं है। मणि मधुकर लिखते हैं – "नग्न होना .....

मर्यादा को खोना नहीं है। स्त्री की मर्यादा उसके अंगों में नहीं, अन्तस में होती है। गाडिया लुहार की औरत को मालूम है कि देह से परे होकर, किस ठौर पर जीवन के सच्चे राग पर अँगुली रखी जा सकती है ..... वह किस वाद्य के अन्तर्तल में होता है।"[5]

मारवाड़ की अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार कृषि एवं पशुपालन है। कृषि का होना नियति के अधीन है। प्राकृतिक प्रकोप के कारण मरु प्रदेश में कम ही पैदा होती है। पशु उनकी अचल सम्पत्ति है। मरु प्रदेश के लोग पशुओं के प्रति अपनत्व का भाव रखते हैं। इन पशुओं के नाम भी व्यक्तियों की तरह होते हैं। मणि मधुकर के उपन्यासों के प्रमुख पात्रों का पशुओं के प्रति अपनत्व का भाव अभिव्यक्त हुआ है। जस्सू अपने ऊँट का नाम मद्दू रखता है। सफेद मेमने की 'सुरजा' के पास भी पशुओं का एक आत्मीय कबीला था। लीली, सुरंगी, बड़ोडी, कटसींगी, भीड़की इत्यादि गायें उसकी प्रमुख सहेली थी। जानवर विश्वास की भी कीमत समझते हैं। समय के मुताबिक ही वे मालिक का साथ भी देते हैं। 'सफेद मेमने' का मद्दू ऊँट डाक के थैले को खुद व खुद ले आता है। जस्सू कहता है – "मैंने मद्दू की नकेल खोल दी और उसे वापस मोड़ते हुए कह दिया कि जा थैला ढूँढ के ला। खुद वही खेजड़े की छाँह में लेट गया। ..... आँख खुली तो देखता हूँ कि मद्दू पेड़ के तने से अपना बदन रगड़ रहा है और उसने दाँतों में थैला पकड़ रखा है।"[6] मारवाड़ के लोग पशुओं के दुःख दर्द के गहरे जानकार होते हैं। 'मद्दू' के जुगाली करने पर जस्सू उसके मुँह में शराब डाल देता है। यह अपनत्व का भाव उनके पशुप्रेम को दिग्दर्शित करता है। रामौतार तो छिबका मर जाने पर शोकाकुल होकर रुदन भी करता है। बन्ना रक्खे से कहती है – "तुम्हारे साहब ढाँ–ढाँ करके रो रहे थे। आँसू इतनी तेज़ रफ्तार से बह रहे थे कि नाले भर जाएँ। पुचकारा, मनाया, पूछा तो मालूम पड़ा कि उनका प्यारा–दुलारा छिबका मर गया था। एक हिरन के शोक में किसी को इतना विलाप करते देखा है तुमने।"[7] रेतीले प्रदेश में पशु ही उनके आवागमन के साधन होते हैं। इसलिए ऊँट को रेगिस्तान का जहाज कहा जाता है।

मारवाड़ की जलवायु शुष्क होने के कारण वहाँ ज्वार, बाजरा, चना अरहर की फसलें ही पैदा होती हैं। इसलिए वहाँ के लोगों के खान–पान में बाजरा एवं ज्वार की महती भूमिका होती है। बाजरा, ज्वार, चना की रोटी, सांगरी

या कांदे का अचार या सब्जी मरु प्रदेश का प्रमुख भोजन है। हरी सब्जियों का अभाव होने के कारण वहाँ बेसन की गट्टी या सांगरी की भाजी ही परोसी जाती है। खान–पान में दूध, घी, छाछ, दही, मक्खन का भरपूर मात्रा में प्रयोग किया जाता है। सुबह–शाम को दलिया, छाछ या दूध ही प्रमुख भोजन होता है। अनाज की घूघरी बनाकर गुड़ मिलाकर खाना वहाँ का प्रमुख भोजन है। रम्या को बुज्जी सर्वप्रथम बेसण की रोटी व गरवाई के काँदे परोसती है। वह कहती है – "मेरे पास बेसण की रोटी है और गरवाई से काँदे लेके आई हूँ। खायेगी ?"[8] आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति की हैसियत से ही व्यक्ति को खाना परोसा जाता है। सामान्यतः मिट्टी एवं स्टील के पात्रों में ही भोजन परोसा जाता है। खाने से पूर्व हाथ–मुँह धोना पवित्रता का सूचक माना जाता है। खाने के बाद मरु प्रदेश में हुक्का–तम्बाकू की परम्परा प्रचलित है। यह परम्परा मान–सम्मान को सूचित करती है। मणि मधुकर ने अपने उपन्यासों में अम्मल, केसर कस्तूरी और जँवरी पीने–खाने की परम्परा को रूपायित किया है। अम्मल खाने की परम्परा बहुतायत मात्रा में मिलती है। जवँरी या केसर कस्तूरी का आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ लोग पान करते हैं। मारवाड़ में खान–पान एवं रहन–सहन में जातीयता पूर्णतः हावी है। लेकिन मणि मधुकर ने इस जातिवाद की बखिया उधेड़ दी है। 'सफेद मेमने' उपन्यास में उन्होंने सामूहिक भोजन का आयोजन कराके इस रूढ़ि को तोड़ा है। रणसी, जन्तरी, भानमल, जस्सू और रामौतार विविध जातियों के होने के बावजूद एक जगह और एक पात्र में भोजन करते हैं। 'पिंजरे में पन्ना' उपन्यास में रम्या और नंदे गाडुले लुहारों के साथ रहकर खानाबदोश जिंदगी जीते हैं और उनके साथ ही भोजन करते हैं। 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में धर्म, जाति और वर्ग जैसी समस्याओं और रूढ़ियों को भूख तोड़ देती है। जातीय रूढ़ियों एवं संस्कारों को तोड़ना ही मणि मधुकर की सबसे बड़ी देन है।

रीतिरिवाज एवं लोकोत्सव

राजस्थान के रीतिरिवाज एवं लोकोत्सव पूर्णतः परम्परागत हैं। यहाँ के रीतिरिवाजों में सामाजिकता की उच्च भावना विद्यमान है। जन्मोत्सव से लेकर मृत्योत्सव तक जो भी रिवाज प्रचलित हैं, वे संघर्षमय जीवन को सूचित करते हैं।

आज भी जच्चा घर में तलवार रखी जाती है। जन्म के अवसरों पर गाये जाने वाले गीत गौरवान्वित परम्परा को सूचित करते हैं। आरत्या एवं साँथिया मांगलिकता के सूचक हैं।

मारवाड़ के रीति–रिवाजों की महत्त्वपूर्ण विशेषता उनका सादा व सरल होना है। पुत्र के जन्मोत्सव पर थाली बजाकर शुभ समाचार की सूचना दी जाती है। जन्मोत्सव के आठवें दिन एक विशेष प्रकार का खाद्य पदार्थ होता है जिसमें गुड़, शक्कर व पानी का दलिया होता है। प्रत्येक वर्ग का व्यक्ति इन रीति–रिवाजों का पालन बिना किसी सुविधा के कर लेता है। इसी प्रकार विवाह के अवसर पर प्रचलित परम्पराएँ अपनी विशेषता रखती हैं। विवाह के पूर्व सगाई के लिए कन्या पक्ष वालों के यहाँ नाई व व्यास का जाना, विवाह के प्रथम दिन गणेश पूजन का होना, कन्या पर तेल चढ़ाना, दूसरे दिन भात, माहेरा व निकासी निकालना, कन्या के द्वार पर तोरण मारना, फेरे लेना, बढ़ार और अंत में बारात का विदा होना प्रमुख रिवाज है। विवाह के अवसर पर गीत गाना और व्यंग्यात्मक गालियाँ देना राजस्थान की विशेषता है।

मणि मधुकर ने अपने उपन्यासों में जन्मोत्सव एवं मृत्योत्सव को मार्मिक ढंग से अभिव्यक्त किया है। 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में पुत्ररत्न की प्राप्ति में जमाल उत्सव करता है। अकाल की भयावह स्थिति में भी जमाल अपनी खुशियां बिखेरता है। लड़का होने की खुशी में थाली का बजाना, गुड़ का बाँटना, नाचना, गीत गाना प्रमुख उत्सव हैं। कैम्प के सभी दरिद्र लोग एकजुट होकर उत्सव मनाते हैं। फूलकी काकी गीत भी गाती हैं :

"जमाल के छोरा हुआ है भई छोरा
खूब गोरा
जैसे दूध का डोरा।"[9]

स्वयं जमाल थाली बजाकर लंगूर नाच करता है। गज्जी कहता है "अहे–अहे, छोरा हुआ है जमाल के। अब वो लंगूर का नाच दिखलायेगा नाच कर। देखना भई ! सब लोग देखना। इसके छोरे को भी बुला लो। आखिर वो भी तो देखे अपने बाप का करतब।"[10] बछराज इसी खुशी में गुड़ बाँटता है। पूरे कैम्प में गुड़ और दलिया बनाकर खाया जाता है। यह जन्मोत्सव ही उनके लिए जीवनोत्सव बनकर आता है।

अकाल की भयावह स्थिति और आर्थिक विवशता के चलते जमाल पुत्र जन्मोत्सव पर कुआँ पूजन भी नहीं कर पाता है। कुआँ पूजन समारोह के दिन परिवार वाले पुत्र जन्म की खुशी में भोज करते हैं जिसमें मित्रगण एवं चिर–परिचित लोगों को निमन्त्रित किया जाता है। पुत्र की माँ के पीहर से भात लाया जाता है। कुआँ पूजन की रात नाच–गान व मंडली तमाशा भी होता है। पुत्र जन्म के दूसरे या तीसरे दिन पण्डित या मौलवी नामकरण करता है तथा छठें दिन 'छठवीं', मनाई जाती है। उपर्युक्त रीति–रिवाज एवं रस्में जमाल आर्थिक विवशता के चलते नहीं मना पाता है। जमाल उस वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है जो आर्थिक विवशता एवं दयनीय स्थिति के कारण अपने जीवनोत्सव नहीं मना पाते हैं। अर्थप्रधान युग में जमाल आर्थिक जकड़नों में कैद है। जमाल जिस तरह से पुत्ररत्न प्राप्ति की खुशियाँ मनाता है, उससे कैम्प की मालकिन पुष्पाबाई खीझ जाती हैं। गरीबों की खुशी को वह उपद्रव कहती हैं। मणि मधुकर लिखते हैं कि इस उत्सव को देखकर पुष्पाबाई नथुने फड़फड़ाती है। भौहें हिलाती है और कैम्प के सभी लोगों को अव्वल दर्जे के उजड्ड कहती है। मणि मधुकर ने जमाल और पुष्पाबाई के माध यम से वर्ग–वैषम्य को चित्रित किया है।

मणि मधुकर के उपन्यासों में जीवन के अन्तिम संस्कार अंत्येष्टि का अंकन भी मिलता है। पत्तों की बिरादरी उपन्यास के प्रमुख पात्र बछराज की मृत्यु होने पर उसका विधिवत क्रियाकर्म किया जाता है। इस संस्कार के मूल में यह विचार है कि मृत प्राणी परलोक में शान्ति लाभ प्राप्त करेगा। 'सफेद मेमने' उपन्यास के प्रमुख पात्र मंगली बुआ के जेठ व बछराज की शव यात्रा निकाली जाती है। मरणासन्न व्यक्तियों को चारपाई से उतारकर स्वच्छ, गोबर से लीपी भूमि पर लिटा देते हैं। मृतक का मुख उत्तर की ओर तथा पैर दक्षिण की ओर कर दिये जाते हैं। मृतक के शरीर पर कफन बांध दिया जाता है। बछराज के लिए यह कफन भी नसीब नहीं हो पाता है। इसलिए उसकी पुरानी धोती को ही कफन समझकर बांध देते हैं। अंत्येष्टि क्रिया करने वाले व्यक्ति को मृतक के लिए पिण्डदान देना पड़ता है। अर्थी के साथ जो अग्नि लाई जाती है उसी से चिता प्रज्ज्वलित कर दी जाती है।

अर्थी के साथ जाने वाले व्यक्ति भजन गाते चलते हैं। सफेद मेमने उपन्यास के पात्र रामौतार 'हरि कहो हरि कहो', 'राम नाम सत्य है, सत्य बोलो

गत्य है, सत्य बोले गति है कि सत्य बोले गति है' इत्यादि शवयात्रा के दौरान बोलता है। मशान मार्ग में शव को ठहराया भी जाता है। मृतक का पुत्र या निकट सम्बन्धी शव के चारों ओर पाँच बार परिक्रमा कर चिता को जलाता है। चिता जलाने के कुछ समय बाद मृतक की कपाल बेध दी जाती है। शव के पूर्ण जल जाने पर सभी संबंधी अर्थी के दाहिने से बायें घूमकर शुद्धि के लिए स्नान करने चले जाते हैं।

मणि मधुकर ने अंत्येष्टि संस्कार में शव–यात्रा, शवदाह का वर्णन किया है। अशौच, अस्थि संचयन, पिण्डदान, पगड़ी बांधना और पानीवाडा जैसे अन्य संस्कार उनके लेखन से अछूते रहे हैं। मृतक के निकट सम्बन्धियों को शवदाह के बाद अशौच रखना पड़ता है। अशौच का काल सामान्यतः बारह दिन होता है। काल निर्धारण में मृतक की जाति, आयु और लिंग भेद अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। दाह क्रिया के तीसरे दिन चिता भस्म पर दूध और जल का सिंचन कर मंत्रों के उच्चारण के साथ अस्थियों को इकट्ठा किया जाता है। इसे फूल चुगना कहते हैं। अस्थियों को नदी में डालकर मृतक की तृप्ति के लिए ब्राह्मण भोज किया जाता है। नौसर के दिन मृतक के ज्येष्ठ पुत्र को पगड़ी बंधाई जाती है।

सामासिक संस्कृति :

मरु अंचल राजस्थान की दक्षिण–पश्चिमी सीमा है जो भारत और पाक के मध्य विभाजित है। मारवाड़ी समाज मुख्यतः कृषि एवं पशुपालन पर आधारित है। यहाँ अनेक जातियाँ निवास करती हैं यथा – जाट, राजपूत, मुसलमान, गुर्जर, कुम्हार, चमार, ब्राह्मण, नाई आदि। इन सभी जातियों की पहचान 'मारवाड़ी' के नाम से ही होती है। मणि मधुकर ने अपने उपन्यास साहित्य में मारवाड़ी समाज में व्याप्त बुराइयों, वैमनस्यों, धार्मिक अंधविश्वासों एवं धार्मिक कट्टरताओं को सशक्त अभिव्यक्ति दी है। समाज में लोकमांगलिकता का स्थान रिक्त हो गया है। मणि मधुकर ने समाज के यथार्थ से रू–ब–रू कराया है। वे एक आदर्श समाज की स्थापना करने के लिए सामासिक संस्कृति को महत्त्व देते हैं।

मणि मधुकर ने व्यक्ति के जाति, धर्म, वर्ग, समाज के विभाजन को नकारा है। मणि का जुड़ाव सामान्य एवं गरीब व्यक्ति से था। गरीबों के दुःख,

पीड़ा, विषाद, आह, ग्लानि एवं विवशता को उन्होंने समग्र रूप से अभिव्यक्त किया है। गरीब एवं मजदूर व्यक्तियों की न कोई जाति होती है, न धर्म और न ही उनका वर्ग। ऐसे लोगों की विवशताएँ ही उन्हें बन्धन में जकड़ देती हैं। मणि मधुकर नवजागरण का सन्देश देता है और उनसे उम्मीद करता है कि वे कमजोर न बनें। उस दीवार से लड़ें जो उनमें अलगाव पैदा करती है –

"कमजोर मत बनो
उस दीवार से लड़ो
जो हमें अलग करती है
पर अकेले नहीं
तुम्हारी वापसी आंधी की वापसी है।"[11]

भारत का विभाजन मुख्य रूप से राजनीति से अभिप्रेरित था। वर्चस्व की लड़ाई ने ही भारत को भारत, पाक और बंगलादेश में विभाजित करा दिया है। मणि मधुकर एक संवेदनशील और सामान्य व्यक्ति के दुःख–दर्दों से जुड़े होने के कारण इस विभाजन को नकारते हैं। एक गरीब या भूखे व्यक्ति का न कोई देश होता है और न ही प्रान्त। 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास में मणि मधुकर लिखते हैं – "यह भैंच्यो पखेस्तान और ईंदस्तान का खूब टण्टा है। भूखे आदमी का कोई मुलक होता है क्या, जहाँ दो टूक मिलेंगे, चला जायेगा।"[12] शुबो, बछराज, जुगनी और अचली पेट की ज्वाला को शांत करने के लिए पाकिस्तान छोड़कर हिन्दुस्तान आ जाते हैं। देश का विभाजन और विभाजन की सीमाबन्दी अमानवीयता का द्योतक है। मणि मधुकर के उपन्यासों में वर्णित पात्र देश विभाजन को नकार देते हैं। शुबो कहता है – "किसी माँ के यार ने पखेस्तान बना दिया, किसी ने ईंदस्तान। सिरफिरे स्साले। उनके बनाने से होता क्या है ? मुझे तो उन्होंने नहीं बनाया ? तुम्हें भी नहीं। सो, हमें मुलुकों में बाँटकर अलग करने वाले वो घसियारे ..... कौन होते हैं।"[13] जुगनी और शुबो विभाजन का ऐलान करने वाले खम्भों का उपहास उड़ाते हैं। सरहद पर ही उन्होंने 'शुबो' की ढाणी बसाई। शुबो का सोने–बैठने का छपरा हिन्दुस्तान में और रसोई पाकिस्तान में। इनका रोज इधर–उधर जाना ही सामासिकता का परिचय देता है। शुबो एक ऐसा कुआँ खोदता है जिससे पानी खींचते समय रस्सा की 'गूण' पाकिस्तान की धरती पर चली जाती थी। शुबो की जिद के कारण ही रोज हजारों व्यक्तियों और पशुओं का हिन्दुस्तान–पाकिस्तान

आना–जाना लगा रहता था। शुबो की जिद स्वयं मणि मधुकर की जिद है। मणि ऐसी विवशता पैदा करना चाहता है जिससे भारत पुनः अपने गौरवशाली अतीत को प्राप्त कर ले।

मणि मधुकर इस सत्य से वाकिफ थे कि धार्मिक कट्टरता ही साम्प्रदायिकता या साम्प्रदायिक वैमनस्य की जननी है। भारत में विविध धर्मावलम्बी निवास करते हैं। लेकिन ईश्वर के नाम पर विविध धर्मों के लोग वैमनस्य के चंगुल में फँस जाते हैं। मणि मधुकर ने ईश्वर की सत्ता को नकार दिया है। इस नकार के पीछे सार्त्र के अस्तित्ववाद का गहरा प्रभाव था। सफेद मेमने में मणि मधुकर लिखते हैं – "असल में ईश्वर कुछ नहीं है, सिर्फ़ एक ख़याल है – जैसे जीवन, जैसे धूप, जैसे पानी एक खयाल है।"[14] लेखक की धारणा है कि ईश्वर जैसी कोई सत्ता नहीं होती है। ईश्वर में विश्वास करने से मन भी कमजोर हो जाता है। सार्त्र के जीवन, मृत्यु, ईश्वर, धर्म आदि संबंधित विचारों की मणि मधुकर को गहरी समझ थी। उन्होंने व्यक्ति के अस्तित्व को प्रमुख माना है। वे लिखते हैं "मृत्यु व्यक्ति से काफी कुछ छीन तो लेती है – मसलन उसका 'एक' जीवन ..... जिसके रहते वह सूर्योदय, पहाड़, फूल, झरने और सुन्दरताएँ देख सकता है। किन्तु मौत किसी भी व्यक्ति को मार नहीं सकती है। साँस बन्द हो जाने आग में जल जाने या कब्र में गल जाने से कोई मरता नहीं है।"[15]

मणि मधुकर एक ऐसा समाज, सभ्यता एवं संस्कृति विकसित करना चाहते हैं जिसमें क्षेत्रवाद, जातिवाद, धार्मिक कट्टरता, अस्पृश्यता, साम्प्रदायिकता को रंचमात्र भी स्थान न हो। अर्थात् समरसता एवं सामासिक संस्कृति से युक्त समाज। वे घृणा, द्वैष के स्थान पर मानवीय प्रेम एवं मानवीय मूल्यों को स्थापित करना चाहते हैं।

लोकगीत, लोकनाट्य एवं लोकवाद्य

लोकगीतों का संबंध मानव मन के स्वाभाविक प्रस्फुटन से है। लोकगीत स्थानीय जनता की भाषा एवं संस्कृति को रूपायित करते हैं। महात्मा गाँधी ने लोकगीतों को स्थानीय संस्कृति का पहरेदार माना है।" लोकजीवन के सुख–दुख, हर्ष–उल्लास, विषाद और संघर्ष को अभिव्यक्त करते हुए लोकगीत कोटि–कोटि

हृदयों का प्रतिनिधित्व करते हैं। पनिहारिन और बोझा ढोती हुई स्त्रियों के साथ घर में चक्की पीसती हुई महिलाओं के सुरीले कंठों में रचे–बसे लोकगीत जन–जीवन में इतने गहरे बैठे हुए हैं कि ये जन–जीवन के अविछिन्न अंग हैं। लोक–जीवन के चप्पे में, लम्हे–लम्हे में, पोर–पोर में लोकगीत रचे–बसे हैं। समाज लोकगीतों के दर्पण में अपना प्रतिबिम्ब देखता आया है। लोकगीतों को गाकर सुनकर किसान मजदूर अपनी थकान मिटाते हैं। लोकगीतों की यह परम्परा आदिम युग से चली आ रही है जिससे लोकसंस्कृति अपने मूल रूप में झंकृत होती है। कहना न होगा कि मानव के संस्कारों की व्यंजना इन लोकगीतों में बराबर होती रही है।"[16]

मारवाड़ में लोकगीतों की एक समृद्ध परम्परा रही है। इन गीतों में ही मारवाड़ी समाज की सभ्यता एवं संस्कृति निहित है। लोकगीत बिना प्रशिक्षण अथवा अभ्यास के सहज कण्ठ से निकली अभिव्यक्ति है जिसमें जनसाधारण का उल्लास, प्रेम, करुणा, दुःख की व्यंजना प्रकट होती है। मरु अंचल के गीत यहाँ की प्राकृतिक परिस्थितियों से प्रभावित है। ये लोग अपने हृदय के सूनेपन को इन लोकगीतों के माध्यम से ही दूर करते हैं। मरु प्रदेश के लोकगीतों में सर्वाधिक संख्या संस्कारों, त्यौहारों व पर्वों के अवसर पर परिवार की स्त्रियों द्वारा गाये जाने वाले गीतों की है।

मणि मधुकर ने अपने साहित्य में विविध विषयीगीतों को सम्मिलित किया है। जनसाधारण के गीतों में संस्कार संबंधी, त्यौहार–पर्व ऋतु, प्रेमपरक एवं देवी देवताओं संबंधी आदि को मणि मधुकर ने अभिव्यक्ति दी है।

संस्कार संबंधी गीतों में पुत्र जन्म, विवाह, सुन्नत आदि संस्कारों से संबंधित लोकगीत प्रमुख हैं। विवाह संस्कार के समय भिन्न–भिन्न रस्मों जैसे चाकपूजा, भात, घुड़चढ़ी आदि के लिए अलग–अलग लोकगीत गाये जाते हैं। पुत्र जन्मोत्सव से सम्बन्धित गीत जच्चा के गीत या होलर के गीत कहे जाते हैं। इन गीतों में नवजात शिशु के वस्त्र, जच्चा के वस्त्र, पुनर्जन्म की खुशी, गर्भ की पीड़ा आदि का चित्रण है। जमाल के पुत्र होने पर थाली बजाकर लोकगीत गाया जाता है –

"जमाल के छोरा हुआ है भई, छोरा
खूब गोरा
जैसे दूध का डोरा।"[17]

मारवाड़ समाज में जिस तरह भिन्न–भिन्न संस्कारों से संबंधित अलग–अलग लोकगीत हैं, उसी प्रकार विभिन्न पर्व, त्योहार, ऋतु, प्रेम एवं देवी–देवताओं से संबंधित भी लोकगीत विद्यमान हैं। रोहिड़े के वृक्ष की राजस्थान में अत्यधिक मान्यता है जिसकी चर्चा मणि मधुकर अत्यंत परम्परागत रूप में करते हैं –

"रोईडै रा लाल – लाल फूल
म्हांरी हथेली में।
कठै सूं आया, रोइडै रा बीज
कुण लगायौ औ बांको जब्बर रूंख
किण हाथां ही इण री देख संभाल।"[18]

राजस्थान में लोकदेवों के प्रति अत्यधिक आस्था रहती है। लोकदेवता भैरुंजी के प्रति स्थानीय लोगों की मान्यता को मणि मधुकर इस प्रकार प्रकट करते हैं –

"भैरुंजी वां नै पैलां बम्बेम्मारी देवै
पछै रिछ्या करै
तौ वै बापड़ा वीं रौ थांन क्यूं उपाडै।"[19]

लोकदेवता भैरुंजी के स्वरूप का चित्रण मणि मधुकर इस प्रकार करते हैं –

"डावै हाथ कुवाडौ
जीवणै में
गंडासौ।
लोकराज रै इण भैरुं री
थरपण
कुणसै थांन में करां ?"[20]

गोगाजी के भक्त रणसी और जन्तरी मोरचंग की सहायता से भक्तिपरक गीत गाते हैं –

"सूत्यो रे गूगो म्हारो मदछक रखरियै री,
पाल लैवे रे हिलोला जलधर।"[21]

गोगाजी के भजन भी गाये जाते हैं जैसे –

"मधुरो मधुरो हाल रे मोबीडा करलाकुण तो
उडीके थाने देस भाय।
कुण तो उडीकै भायला कुण थारै, गैला में पलका बिछाय।
आनै माँ ऊमटै रे काली कलायण
रस्ताँ माँ कांटों री बाद।"[22]

मारवाड़ में लोकदेवताओं या लोकदेवियों की फड़ भी गायी जाती है। भक्ति एवं नीति से युक्त गीतों को फड़ में उद्धृत किया जाता है। उज्जैदान का यह पद फड़ से उद्धृत है –

"हिबडै नै ठाडौ बख में राखजै
मन को खूब काबू में रखना रे मिन्तरा
इस किनारे से चले हो तो उस किनारे पहुँचकर दम लेना।"[23]

उज्जैदान की कविता नीतिपरक भी है –

"भाई रे भाई
कलेजे को सखत बना ले
पहाड़ हो जा
उत्ता ही मजबूत
उत्ता ही ऊँचा और उत्ता ही निधड़क निडर बन
सामना कर हर रितु का आँधी का बरफ का
दुःख का और अपने ही भीतर के उस भाव का
जो तुझे दुर्बल बनाता है।"[24]

उज्जैदान की यह कविता प्राकृतिक परिवेश और प्राकृतिक प्रकोप से जूझने वाली कविता है।

मणि मधुकर ने विभिन्न ऋतु एवं प्रेमपरक गीतों को भी अपने कथानक का विषय बनाया है। मरु अंचल की प्रमुख फसल बाजरा है। बरसात के मौसम में वहाँ की औरतें बाजरा को लेकर ही गीत गाती हैं –

"महाने लागै घणौ सुवाद लीलौ बाजरडो"[25]

मारवाड़ी समाज में 'बारहमासी' गीत भी प्रसिद्ध है, जिसमें बारहों महीने का वर्णन होता है।

उपर्युक्त विषयों के अलावा यहाँ प्रेमपरक गीत भी गाये जाते हैं। इन गीतों का उद्देश्य माहौल को खुशनुमा बनाने का होता है। 'सफेद मेमने' उपन्यास की बन्ना और 'पिंजरे में पन्ना' उपन्यास की नायिका पन्ना प्रेमपरक गीत गाकर उल्लासमय जीवन जीती है –

"हवा में उड़ता जाए मेरा लाल दुपट्टा मलमल का हो जी हो जी"[26]

"मोहवत मेंय अइसे कदडम डगमगाडये जमाने ये SS समुझा SS"[27]

प्रेम दीवानी पन्ना भी यह प्रसिद्ध गीत गाती है –

"मैं तो अच्छत कुँवारी हूँ
राजा इन्दर की नायिका हूँ।"[28]

मणि मधुकर ने प्रेमपरक गीतों के साथ–साथ प्रेमपरक कविताओं को भी यथास्थान वर्णित किया है। बन्ना और पन्ना जहाँ प्रेमपरक गीतों का प्रतिनिधित्व करती हैं वही रम्या प्रेमपरक कविताओं का। रम्या को जीवनानंद व मायकोवस्की की प्रेमपरक कविताएँ याद हैं।

"एक विलुप्त नगरी
एक धुंध का महल
उसमें खो गई है वह स्त्री
जिसने मुझे प्यार किया और
जिसका चेहरा मैंने कभी देखा नहीं।"[29]

मायकोवस्की की यह प्रेम कविता प्रसिद्ध है –

"मुझे मालूम था कि एक कोई जगह होती है
लोगों के सीने में
जहाँ दिल रखा जाता है
सभी जानते हैं ..... लेकिन जब मेरी बारी आयी तो
एकाएक रचना का रूप डाँवाडोल हो उठा
मुझे पूरा दिल ही बना दिया गया
वह समूचे बदन में धड़कता था।"[30]

मणि मधुकर ने 'सफेद मेमने' उपन्यास में बालगीत को लोकशैली में अभिव्यंजित किया है –

"डाकिया रे डाकिया
खुल गया तेरा जांघिया
जांघिये में जू
गाड़ी आई सूँ ऽ ऽ
उसमें से उतरी एक लुगाई
लुगाई ने किये तमाशे
डाकिया खर–खर खाँसे।"[31]

लोकगीतों में स्थानीय रंगत होती है। मारवाड़ के लोकगीत यहाँ के लोकजीवन की अमूल्य निधि है। यहाँ के लोकगीतों को सभी समुदायों के लोग परस्पर मिलकर गाते हैं। सामूहिकता उन लोकगीतों की रंगत को बढ़ा देती है। किसी लोकगीत पर किसी समुदाय विशेष का अधिकार नहीं होता है।

लोकवाद्य लोकगीत या संगीत के महत्त्वपूर्ण अंग होते हैं। इनके प्रयोग से गीतों व नृत्यों में माधुर्य की वृद्धि होती है, साथ ही वातावरण की भी प्रभावशाली निर्मिति होती है। मारवाड़ के लोकगीतों में यहाँ के परिवेश, स्थिति व भावों के अनुरूप ही लोकवाद्यों का प्रचुर प्रयोग किया जाता है। तत (जिसमें तार लगे हों), घन (धातु से निर्मित), सुषिर (फूँक से बजे) और अवनद्ध (चमड़े आदि से ढके हों) आदि लोकवाद्यों की सहायता से ही लोकसंगीत में माधुर्य पैदा होता है। 'सफेद मेमने' उपन्यास का प्रमुख रणसी मोरचंग, अलगोझा, भपंग की सहायता से गोगाजी के भजन गाता है। रणसी के पुत्र मिनिया को मोरचंग वाद्ययंत्र बजाने में महारथ हासिल है। मिनिया मोरचंग को 'टिऊँ टिऊँ टिंग टिऊँ टिऊँ टिऊँ टिंग' की लय एवं ध्वनि के आधार पर बजाता है।

मारवाड़ में ढोली, मिरासी लंघा, ढाढ़ी, कामड़, भोपे, भाट, जोगी, कालबेलिया एवं मेव आदि जातियों ने वाद्यों को विरासत के रूप में प्राप्त किया है। ढ़ोली, ढाढ़ी, मिरासी सारंगी का प्रयोग करते हैं। लंघा जाति के लोग सुरिंदा, सुरनाई, मुरला, सतारा मोरचंग आदि वाद्यों का उपयोग करते हैं। कामड़ जाति के लोग तंदूरे और मंजीरों का उपयोग करते हैं। मरु अंचल के लोकसंगीत में तंबूरा, एकतारा व दोतारा ही ऐसे वाद्य हैं जो श्रुति श्रेणी में आते हैं।

मारवाड़ में लोकनाट्य की परम्परा प्राचीन है। इस परम्परा को हम ख्याल, स्वांग और लीला के रूप में पाते हैं। सामाजिक और सामुदायिक भावनाओं की अभिव्यक्ति को हम ख्याल, रम्मत, तमाशे, नौटंकी, भवाई, गँवरी आदि के रूप में विकसित पाते हैं। ख्याल राजस्थान के लोकनाट्य की सबसे लोकप्रिय विधा है। इसको प्रस्तुत करने वाली जातियाँ न केवल अपनी जीविका अर्जित कर रही हैं बल्कि लोकनाट्यों का विकास व रंगमंचीय प्रभावोत्पादकता को बनाये हुए हैं। 'पिंजरे में पन्ना' उपन्यास की नायिका पन्ना सुरध्यान ख्याल मण्डली की नायिका है। वह धार्मिक कथानकों को गायन, वादन और संवाद से सम्मिश्रित कर गहन प्रभाव उत्पन्न करती है। नायिका पन्ना पद्मिनी रोख्याल, पार्वती रो ख्याल, रूठी राणी रो ख्याल, अमरसिंह रो ख्याल, इत्यादि ख्यालों को सुरध्यानी ख्याल मण्डली की सहायता से प्रस्तुत करती है। पन्ना की मृत्यु के बाद इस सुरध्यान ख्याल मण्डली की नायिका नैणतारा बनती है। नैणतारा और रैवतदान की जोड़ी धार्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से कथानक चुनकर नाटकों को प्रस्तुत करती थी। लोकसंस्कृति के प्रमुख अंगों यथा – लोकगीत, लोकवाद्य, लोकनृत्य और लोकनाट्यों को मणि मधुकर ने अपने उपन्यासों में वर्णित किया है। उपर्युक्त विधाओं के आधार पर मरु अंचल की मनोरंजन की प्रवृत्तियों से परिचय प्राप्त हुआ है।

लोक की भाषा

मारवाड़ क्षेत्र के नाम के आधार पर ही 'मारवाड़ी' नाम दिया गया है। मारवाड़ी ही यहाँ के स्थानीय लोगों की भाषा है। मारवाड़ी भाषा का व्यवहार राजस्थान के दक्षिणी–पश्चिमी जिलों (जैसलमेर, बीकानेर, बाड़मेर) में किया जाता है। मरु अंचल के लोग अपने व्यवहार में मारवाड़ी भाषा, स्थानीय लोकोक्ति, मुहावरों एवं गालियों का प्रयोग करते हैं। स्थानीय भाषा में स्थानीय रंगत भी होती है।

मणि मधुकर उपन्यासकार के साथ–साथ एक सुप्रसिद्ध नाटककार तथा भावुक कवि भी हैं। इसलिए उनकी भाषा में जगह–जगह उक्त दोनों विशेषताओं का प्रभाव दिखायी देता है। उपन्यास की भाषा में भी बोलचाल के सामान्य शब्द, कविता की आंतरिक संरचना एवं प्रवाह मिलता है –

"जस्सू से बतियाते हुए उसे लगा कि वह अभी खत्म नहीं हुई है, उसमें जान है और किसी मजबूत तने के सहारे वह खड़ी हो सकती है। उसने अपने जीवित अंशों को जोड़ना शुरू किया था कि झटका लगा भूकम्प का सा।"[32]

मणि मधुकर की संवाद योजना परम्परागत कथोपकथन से बिल्कुल अलग है। एक पात्र के बोलते ही आसपास के परिवेश और अन्य पात्रों पर उसकी प्रतिक्रिया होती है। इस प्रकार कथोपकथन एक नयी शैली पैदा करता है –

"वो आदमी आया था अभी। जुगनी सन्न थी। हक्ला रही थी। कौन ?
वो ..... जो इग्यारसीलाल है। मुझे अपने तम्बू में बुलाकर गया है।"[33]

मणि मधुकर ने बहुत से प्रसंगों में लोककथाओं, चुटकुलों और अन्य लेखकों के नाटकों, कविताओं आदि का समीचीन प्रयोग बीच–बीच में किया है। 'सफेद मेमने' उपन्यास में सन्दो की झोपड़ी में सुरजा और जस्सू के मध्य बातचीत होती है। वक्त काटने के लिए सुरजा 'जसमा–ओडणी' की बातें सुनाती है। इस कथा के माध्यम से लेखक ने नारी की विवशता को चित्रित किया है। मणि मधुकर लिखते हैं – "राव खेंगार और सन्दो में क्या अंतर है ? लेकिन जसमा के पास तो मर–मिटने के लिए एक आधार था, उसका पति। सुरजा को वह आधार नहीं मिला और वह अब सन्दो की इच्छा पूर्ति में स्वयं को तिल–तिल जला रही थी। क्या एक कुंआरी लड़की का इस तरह जलना सती होने से कम है।"[34] जाट और राजपूतों के प्रसंग के माध्यम से मणि मधुकर ने समाज में व्याप्त अपकीर्ति को उजागर किया है।

'पत्तों की बिरादरी' में चारण अज्जैदान के सोरठों के उद्धरणों और सरल अनुवादों के माध्यम से लोकजीवन में परिव्याप्त उसकी ख्याति को दर्शाया है। 'पिंजरे में पन्ना' उपन्यास में रसकुंवरी और हीरा के प्रसंग तथा जीवनानंददास की कविता का उल्लेख भी परिस्थिति सापेक्ष्य है। 'नीलदर्पण' नाटक का प्रसंग भी समाज में नारी की स्थिति को उजागर करता है। इन उपन्यासों में ऐसे संवादों की कमी नहीं है जो चरित्र उद्‌घाटन या कथासूत्र को आगे बढ़ाने के लिए आते हैं। कहीं–कहीं लेखक ने संवादों के माध्यम से जीवन के दुरूह प्रश्नों के संबंध में अपने विचार व्यक्त किये हैं। ईश्वर के संबंध मणि मधुकर लिखते हैं – "असल में ईश्वर कुछ नहीं है सिर्फ एक ख़याल है जैसे जीवन, जैसे धूप, जैसे पानी एक

ख़याल है।"[35] मणि मधुकर की भाषा शैली में चित्रात्मकता का भी गुण है। उपन्यास या कहानी पढ़ते समय पाठक अपने आपको प्रत्यक्षदर्शी समझता है।

मारवाड़ के लोकजीवन में गाली–गलौच की भरमार होती है। आपसी बोलचाल में भी गालियाँ प्रयुक्त होती हैं, लेकिन इन गालियों का कोई बुरा नहीं मानता। मारवाड़ी समाज में बात–बात में गाली दी जाती है। लड़ाई–झगड़ों का प्रारम्भ ही गालियों से होता है। गाली लड़ाई में अस्त्र–शस्त्र का भी काम करती हैं। मणि मधुकर ने मारवाड़ समाज में प्रचलित गालियों को भी अपने उपन्यासों में स्थान दिया है। गालियों के उदाहरण है जैसे – टट्टू की औलाद, चुप वे हरामी, झाँट उखाड़ ले मेरी, सूगर की औलाद, सिरफिरे स्याले, सत्यानाश हो तेरा, महतारी के खसम, खसम के खूँसड़े, सूगर का बच्चा, कंजर की औलाद, तू कुतिया इत्यादि। मारवाड़ी समाज में गालियों का खरखरापन विद्यमान है।

मारवाड़ी भाषा लोकोक्ति एवं मुहावरों से युक्त है, साथ ही इसमें हास्य का पुट भी विद्यमान है। स्थानीय लोग अपने दैनिक उपयोग में मुहावरों व लोकोक्तियों का प्रयोग बहुतायत मात्रा में करते हैं। ये कहावतें ही भाषा की जीवंतता को बनाये रखती हैं। स्थानीय लोगों की कहावतें एक धरोहर की भूमिका भी अदा करती हैं। मणि मधुकर ने अनेक मुहावरों का प्रयोग किया है जो इस प्रकार है –

1. जब तक नाज है तब तक आज है।
2. मन–मन भावै मूँडी हलावै।
3. जंग लोहे को खा जाता है, अभाव आदमी को।
4. मरद की बात और टिड्डे की घात। चित्त भी मेरी और पट्ट भी मेरी।
5. डूँगर चढ़ गयी डोमनी गावै आल पताल।
6. कजली का कपाट बन गया।
7. नाक बनिये की डंडी बन जाना।
8. होनी–अनहोनी करम लेखे। न मैं देखूँ न तू देखे।

मणि मधुकर ने मारवाड़ी कहावतों का प्रयोग कर स्थानीय रंगों की छटा बिखेरी है। यथा –

1. भाग में लिख्योही टले कोनी
2. पाँचू आंगलियां ने पुणचौ भारी पड़ै।

3. हूँणी नै नमस्कार
4. ठठेरै री जाइ खुड़कां सूं कोनी डरै।
5. पांगली डाकण पूतां रो भख लेवै।
6. न पेट रेवै, न पाद बाजै।
7. टटग्यौ हाथ, छूटग्यो लंगवाडा रौ साथ।

मणि मधुकर ने रेत, अलाव, सांझ, गंध, सन्नाहट, ढाणी, चरमराहट, धूप, चाँदनी, तारे, चाँद, सूरज, ऊँट, पिलान, गाछ, टिड्डे, पखेरू, दराँती, कोचरी, हगना, मूतना, ठूँठ, डकार, छींक, रौंदना, खेमा इत्यादि सैकड़ों बोलचाल के शब्दों में गहरे मार्मिक अर्थ भरकर उनमें नया असर पैदा किया है। उनके उपन्यासों की भाषा में एक स्वाभाविक प्रवाह मिलता है।

सन्दर्भ सूची

1. पिंजरे में पन्ना – मणि मधुकर, पृ. 37
2. वही, पृ. 66
3. वही, पृ. 22
4. वही, पृ. 43
5. वही, पृ. 63
6. सफेद मेमने – मणि मधुकर, पृ. 69
7. वही, पृ. 42
8. पिंजरे में पन्ना – मणि मधुकर, पृ. 18
9. पत्तों की बिरादरी – मणि मधुकर, पृ. 65
10. वही, पृ. 65
11. घास का घराना – मणि मधुकर, पृ. 49
12. पत्तों की बिरादरी – मणि मधुकर, पृ. 12
13. वही, पृ. 62
14. सफेद मेमने – मणि मधुकर, पृ. 40
15. पिंजरे में पन्ना – मणि मधुकर, पृ. 12
16. लोकसंस्कृति : आयाम और परिप्रेक्ष्य (सं.) महावीर अग्रवाल, भूमिका, पृ. 1
17. पत्तों की बिरादरी – मणि मधुकर, पृ. 65
18. पगफेरो – मणि मधुकर, पृ. 143
19. वही, पृ. 57
20. वही, पृ. 70
21. सफेद मेमने – मणि मधुकर, पृ. 97
22. वही, पृ. 113
23. पत्तों की बिरादरी – मणि मधुकर, पृ. 158
24. वही, पृ. 135
25. वही, पृ. 151
26. सफेद मेमने – मणि मधुकर, पृ. 94
27. वही, पृ. 152
28. पिंजरे में पन्ना – मणि मधुकर, पृ. 122

29. वही, पृ. 31
30. वही, पृ. 143
31. सफेद मेमने – मणि मधुकर, पृ. 64
32. वही, पृ. 72
33. पत्तों की बिरादरी – मणि मधुकर, पृ. 79
34. सफेद मेमने – मणि मधुकर, पृ. 74
35. वही, पृ. 40

उपसंहार

मणि मधुकर का साहित्य परिवेशगत संवेदनाओं की स्पष्ट अभिव्यक्ति है। गरीबी और बेरोजगारी, अज्ञानता, अन्याय और शोषण में आकण्ठ डूबे आधुनिक भारतीय समाज में वे पले और बड़े हुए। स्वानुभूत यथार्थ की स्वाभाविक प्रतिक्रिया ही उनके साहित्य में प्रतिफलित हुई है। वे इस परम्परागत एवं पिछड़ा दिखाई देने वाले भारतीय समाज को एक नया मुकाम देना चाहते हैं। मणि मधुकर एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था स्थापित करना चाहते हैं जो सामाजिक समानता, आर्थिक समाजवाद और सांस्कृतिक ज्ञानोदय पर आधारित हो।

मणि मधुकर ने अपने उपन्यासों का कथास्थल मरुभूमि को चुना है। इस चुनाव का उन्हें एक प्रत्यक्ष लाभ यह मिला है कि स्थलों और प्रकृति के पल–पल पलटते रूप का जीवन्त व स्वाभाविक चित्रण सम्भव हुआ है। लेखक का रेत की आँधियों, अरनों, खेजड़ी के गाछ और ऊँट की बलबलाहट से घनिष्ट संबंध बना हुआ प्रतीत होता है। तीनों उपन्यासों में जिस जनजीवन और परिवेश को लिया गया है उनमें हमारे समाज के ऐसे चरित्र हैं जो देश, काल और परिस्थितियों की सीमाओं का अतिक्रमण करके सार्वदेशिक और सार्वकालिक बन गये हैं। मणि मधुकर की दृष्टि में भारत का बहुसंख्यक समाज गरीबी की रेखा से कहीं नीचे साँस लेता हुआ, सामाजिक–आर्थिक अन्याय एवं शोषण का शिकार है। हमारे देश की आबादी का एक बहुत बड़ा भाग उन समस्त सुविधाओं से वंचित है जो इस युग की बड़ी महत्त्वपूर्ण देन मानी जाती है। इस दृष्टि से तीनों उपन्यासों का कथानक प्रतीक रूप में भी विचारणीय है।

'सफेद मेमने' उपन्यास रेगिस्तान के अन्तहीन विस्तार, पात्रों की मनःस्थिति, उनके निर्जीव मनहूसियत भरे जीवन की ओर संकेत करता है। 'मेमने, अभिशप्त मानवीय स्थिति को प्रतीकात्मक रूप से सूचित करता है। इस कृति में सभी पात्र अपनी जिन्दगी को मजबूरी वश ढोते हैं। उनके लिए जीवन निरर्थक है। उपन्यासकार मणि मधुकर ने राजस्थान के नेगिया गाँव के धूल–धूसरित स्थिति के माध्यम से आज के अभिशप्त मानव का यथार्थ एवं वास्तविक रूप उजागर किया है। समाज के दलित शोषित समूह का एक सार्वदेशिक यथार्थ रूप 'सफेद मेमने' में चित्रित हुआ है।

'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास शिल्प और संवेदना की अभिनय संरचना है, जिसमें मणि मधुकर अपनी रचनात्मकता को विशिष्ट आयाम देने में सफल हुए हैं। इस उपन्यास की कथायात्रा देश के विभाजन के साथ–साथ एक ही परिवेश में पले और संस्कृति में ढले इन्सानों के बँट जाने और इन्सानियत के मिट जाने की प्रक्रिया से शुरू होती है। यह उपन्यास सरहद की अपनी कथायात्रा है जिसमें सीमांत पर बसे लोगों की पीड़ा, यन्त्रणा, जिजीविषा और उत्कट आकांक्षाओं को व्यवस्थित ढंग से रूपायित किया गया है। बेहतर कल की उम्मीद का मर्मान्तक चित्रण इस उपन्यास की विशिष्ट उपलब्धि है। सूखा और अकाल की स्थिति में इस सीमावर्ती क्षेत्र में जो सहायता शिविर लगाये जाते हैं, उनकी वास्तविकता को उजागर करना ही लेखक का मुख्य ध्येय है। वास्तव में यह शोषण और अन्याय के विरुद्ध विद्रोह की गाथा है।

'पिंजरे में पन्ना' का कथानक भी उसी देशकाल और परिस्थितियों की उपज है। इस उपन्यास में मणि मधुकर ने नगरबोध को ग्राम्यबोध में परिवर्तित किया है। कलाकार, कलासाधक और कलाप्रेमी के मध्य एक मानवीय भाव का उद्रेक, सरल, सहज, स्नेह और करुणा का प्रवाह है। मानवीय करुणा की अनुभूति परिवेश को अभिभूत किये हुए है। 'कला' राजनीति और परम्परा के पिंजरे में कैद है। कलाप्रेमी सदैव कला का संरक्षण चाहते हैं। इसी कला को संरक्षित करने के लिए नंदे लोकापवाद का शिकार हो जाता है। नंदे सामाजिक रूढ़ियों की परवाह नहीं करता है लेकिन वह प्यार, सहिष्णुता, सेवा, करुणा का धर्म बराबर निभाता है। अन्याय का वह सदैव प्रतिकार करता है।

मणि मधुकर के उपन्यासों की महती विशेषता रही है कि उनकी कथावस्तु में यथार्थता एवं रोचकता का समावेश होता है। उनके उपन्यासों के कथानक सामाजिक धरातल पर खरे उतरते हैं। 'पत्तों की बिरादरी' में राजस्थान के पश्चिमी छोर पर धूल धूसरित लोगों की अत्यंत सजीव छवियाँ यथार्थ रूप में प्रस्तुत हुई हैं। एक अकाल पीड़ित सहायता शिविर में गरीबों का शोषण तथा दिन–रात फलते–फूलते चंद अवसरवादी लोगों की करतूतों का खुला चिट्ठा इस कृति में अभिव्यक्त हुआ है। नारी की आर्थिक विवशता तथा पुरुष–नारी के सम्बन्धों और शोषक शक्तियों का कारगर प्रतिरोध इस उपन्यास में देखने को मिलता है। 'सफेद मेमने' उपन्यास में अभिशप्त मानवीय जीवन की सशक्त अभिव्यक्ति यथार्थ के धरातल पर हुई है। रेगिस्तान के अन्तहीन विस्तार, पात्रों की

मनःस्थिति, उनके निजी मनहूसियत भरे जीवन की ओर संकेत करता यह एक प्रतीकात्मक उपन्यास है। 'मेरी स्त्रियाँ' उपन्यास में कहीं पाप–पुण्य तो कहीं संघर्ष, हुकूमत और स्मृतियों का रोचक चित्रण मिलता है। इस उपन्यास में स्त्रियों के माध्यम से भारत के सामाजिक, राजनीतिक एवं प्रशासनिक ढाँचे पर प्रहार किया गया है। इसी तरह 'पिंजरे में पन्ना' में नारी के एकाकीपन और भटकाव की स्थिति को व्यक्त किया गया है।

मणि मधुकर उन्मुक्त दृष्टिकोण वाले साहित्यकार हैं। मणि मधुकर के लेखन की यह विशिष्टता थी कि उन्होंने समय के सत्य के साथ और अपनी अनुभूति की गहराई के साथ तारतम्य स्थापित किया है। इसलिए उन्होंने उन्मुक्त और निःसंकोच भाव से साहित्य लेखन किया। उनके कथासाहित्य में मानवीय सम्बन्धों, विसंगतियों एवं यौन कुण्ठाओं का जो खुला चित्रण मिलता है वह सतही न होकर सहज व स्वाभाविक है। इनके उपन्यासों में नर–नारी समागम, पर–पुरुषों की अनुरक्ति या उनकी काम–कुण्ठाओं का उन्मुक्त चित्रण किया गया है। 'पत्तों की बिरादरी' में निर्धनता एवं मजबूरीवश अपनी देह को लुटा देने की प्रवृत्ति को एक चुनौती के रूप में प्रस्तुत किया गया है। उपन्यास में पुष्पाबाई नामक पात्र अपनी महत्त्वाकांक्षाओं और राज–लिप्सा को पूर्ण करने के लिए जैतपाल सिंह से अनैतिक संबंध स्थापित करती है। 'मेरी स्त्रियाँ' उपन्यास में स्वच्छंद और विकृत यौन प्रवृत्ति का चित्रण मिलता है। विकास की अर्थहीनता, उद्देश्यहीनता, निरूपायता, वैयक्तिक एवं सामूहिक असन्तोष के मणि मधुकर प्रत्यक्षदर्शी थे। उन्होंने अपने साहित्य में एक प्रगतिशील सोच रखकर आशाहीनता, निर्ममता और अनैतिकता पर चोट कर जीवन के प्रति उन्मुक्त दृष्टिकोण को व्यक्त किया है।

समाज में व्याप्त उत्पीड़न, शोषण, कुंठा, सामंती शोषण की प्रक्रिया, पूँजीपतियों के द्वारा निम्न–मध्य वर्ग पर किये गये शोषण को आधुनिक साहित्यकारों ने अपने साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। मणि मधुकर की साहित्यिक कृतियों में वर्गगत रूढ़ियों पर कठोर प्रहार किये गये हैं। अपनी सशक्त भाषा के माध्यम से उन्होंने वर्ग वैषम्य से पीड़ित लोगों की दयनीय स्थिति का यथार्थ चित्रण किया है। 'पत्तों की बिरादरी' उपन्यास वर्गगत रूढ़ियों का जीवन्त दस्तावेज है।

तत्कालीन भारतीय समाज में वर्गगत विषमताओं के साथ–साथ धर्मगत रूढ़ियाँ भी व्याप्त थी। धार्मिक, साम्प्रदायिक और जातिगत भेदभाव हमारे भारतीय

समाज में आज भी व्याप्त हैं। धार्मिक वितण्डावाद पर जो प्रहार मणि मधुकर ने किये हैं वे आज भी प्रासंगिक हैं।

मणि मधुकर के कथा साहित्य का अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि इनके साहित्य में परम्पराओं से मुक्ति का आग्रह है। स्पष्ट जीवन दृष्टि रखने वाले एवं उन्मुक्त वर्णनशैली को अपनाने वाले मणि मधुकर ने अपनी पूर्व परम्पराओं को निःसंकोच तोड़ने का प्रयास किया है। उनकी मुख्य प्रवृत्ति नवीन मान्यताओं की स्थापना करना रहा है। उदाहरण के लिए इनके उपन्यासों के कथानक का आधार लोक प्रचलित नहीं है बल्कि निजी संस्कृति को अक्षुण्ण बनाने वाली कथा है। कथा के सम्पूर्ण पात्र उनके अपने बीच रहने वाले, उनके सुख–दुःख में समान रूप से सम्मिलित होने वाले हैं। 'पिंजरे में पन्ना', 'सफेद मेमने' एवं 'पत्तों की बिरादरी' में मणि मधुकर ने राजस्थानी जन–जीवन, उनकी विसंगतियों, विषमताओं को यथार्थ एवं मार्मिक ढंग से अभिव्यक्त किया है।

मणि मधुकर ने साहित्य में मूल्यों के विघटन की पुकार, लघुमानव के महत्त्व, विद्रोह, शोषण के विरुद्ध आक्रामक रूख के साथ–साथ शैली और शिल्प में भी प्राचीन परम्पराओं को तोड़कर नवीन मान्यताओं की स्थापना की। अपनी मातृभूमि के प्रति अनन्य अनुराग की भावना रखने वाले मणि मधुकर ने राजस्थान की सांस्कृतिक विशिष्टताओं का उल्लेख करने के लिए लोकभाषा का प्रयोग किया है। भाषा के क्लिष्टतम रूप का परित्याग कर मणि मधुकर ने भाषा को सर्वसाधारण रूप दिया है।

मणि मधुकर उन विरले उपन्यासकारों में से हैं जिनके रचना कर्म में सतत वैविध्य, विस्तार और एक प्रयोगशीलता नजर आती है। उनका अनुभव संसार व्यापक है। इसी कारण जीवन की वास्तविकता खुद व खुद मुखरित हो जाती है। अपनी अन्तः और वाह्य प्रेरणाओं के कारण वे सामान्य जन–जीवन के साथ तादात्म्य स्थापित कर सके हैं। मणि मधुकर ने अपने पात्रों के माध्यम से यह व्यक्त किया है कि वे उन्मुक्त जीवन दृष्टि वाले वर्जनाओं के व्यामोह से मुक्त व्यक्तित्व के पक्षधर हैं। इनके साहित्य में वर्गगत एवं धर्मगत रूढ़ियों पर प्रहार करते हुए, प्राचीन परम्पराओं से मुक्ति तथा आधुनिक विचारधाराओं एवं मान्यताओं को ग्रहण करने का आग्रह है। मणि मधुकर मरुभूमि के प्रति अनन्य अनुराग और कला साधना के प्रति समर्पित आस्था रखने वाले साहित्यकार हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

आधार ग्रंथ

मणि मधुकर : सफेद मेमने
वाग्देवी प्रकाशन सुगन निवास
चन्दन सागर, बीकानेर, 2000

: पिंजरे में पन्ना
राधाकृष्ण प्रकाशन, 2 अंसारी रोड
दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम सं. 1981

: पत्तों की बिरादरी
राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम सं. 1979

सहायक ग्रन्थ

1. आबिद हुसैन : भारत की राष्ट्रीय संस्कृति
नेशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इण्डिया,
नई दिल्ली–110016, संस्करण 1987

2. अमरसिंह राठौड़ व आशुतोष (सं.) : राजस्थान सुजस संचय
सूचना जन–सम्पर्क निदेशालय, 1998

3. बजरंगलाल लोहिया : राजस्थान की जातियाँ
विशाल भारत बुक डिपो, कलकत्ता, 1954

4. दुर्गादास बसु : भारत का संविधान : एक परिचय
बाधवा एण्ड कम्पनी, नागपुर, संस्करण, 2001

5. डॉ. दिनेश शर्मा, नीरज, जगदीश मिश्रा : समग्र राजस्थान
आचमन प्रकाशन, अजमेर, सं. 2003–04

6. डॉ. गोपीनाथ शर्मा : राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास
राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1995

7. जगमाल सिंह : राजस्थांन के त्योहार व गीत
अंकुर प्रकाशन, दिल्ली, 1988

8. डॉ. जयसिंह नीरज, डॉ. भगवतीलाल शर्मा (सं.) : राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा
राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
13वाँ संस्करण, 2005

9. के.पी. सिंह : राजस्थान
पोपुलर प्रकाशन लिमिटेड, बम्बई, 1998

10. कृष्णदेव उपाध्याय : लोकसाहित्य की भूमिका
साहित्य भवन (प्रा.लि.), इलाहाबाद–3
द्वितीय संस्करण, 1970

11. डॉ. लाजपतराय भल्ला : सामयिक राजस्थान
राजस्थानी समाज, कला व संस्कृति
कुलदीप पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2003

12. मणि मधुकर : रसगन्धर्व, (मराठी अनुवाद)
अमेय प्रकाशन, दिल्ली, 1980

: दुलारी बाई
लिपि प्रकाशन, दिल्ली, 1978

: खेला पोलमपुर
राधाकृष्ण प्रकाशन, 1979

: इकतारे की आँख
सरस्वती विहार प्रकाशन, 1980

: बोलो बोधिवृक्ष
लिपि प्रकाशन, दिल्ली, 1991

: सलवटों का संवाद (एकांकी)
प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 1979

: हवा में अकेले (कहानी संग्रह)
राधाकृष्ण प्रकाशन

12. मणि मधुकर

: भरतमुनि के बाद (कहानी संग्रह)
देवनागर प्रकाशन, 1974

: त्वमेव माता (कहानी संग्रह)
शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली, 1978

: एकवचन – बहुवचन (कहानी संग्रह)
प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 1979

: चुनिन्दा चौदह (कहानी संग्रह)
प्रवीण प्रकाशन, दिल्ली, 1979

: चुपचाप दुःख (कहानी संग्रह)
सरस्वती विहार प्रकाशन, दिल्ली, 1987

: पिछला पहाड़ा (संकलन)
प्रवीण प्रकाशन, दिल्ली, 1979

: बलराम के हजारों नाम (काव्य संग्रह)
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1998

: खण्ड–खण्ड पाखण्ड पर्व (काव्य संग्रह)
अकथ प्रकाशन, जयपुर, 1986

: घास का घराना (काव्य संग्रह)
संभावना प्रकाशन हापुड़, 1977

: सुधी सपनों के तीर (काव्य संग्रह)
मनोरंजन प्रेस, जयपुर, 1964

: पगफेरो (काव्य संग्रह)
अकथ प्रकाशन, जयपुर, 1974

: सूखे सरोवर का भूगोल
प्रभात प्रकाशन, दिल्ली 1981

12. मणि मधुकर : उड़ती हुई नदियाँ
प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 1984

13. मैनेजर पाण्डेय : साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका
हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़
संस्करण 1989

14. महावीर अग्रवाल : लोकसंस्कृति : आयाम एवं परिप्रेक्ष्य
श्रीप्रकाशन, कसारीडीह दुर्ग, म.प्र.–01
संस्करण, 1993

15. प्रेमचंद : सेवासदन
राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1994

16. प्रेमचंद : गोदान
भारतीय ग्रंथ निकेतन
दरियागंज, नई दिल्ली, 1995

17. रामदरश मिश्र : हिन्दी उपन्यास : एक अन्तर्यात्रा
राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
संस्करण, 2001

18. राम आहूजा : सामाजिक समस्याएँ
रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर–04
संस्करण, 1999

19. रैल्फ फॉक्स (अनु. वरोत्तम नागर) : उपन्यास और जन–समुदाय
परिकल्पना प्रकाशन, लखनऊ–02
प्रथम संस्करण – जनवरी 2006

20. डॉ. रामप्रसाद दाधीच : राजस्थानी भाषा–साहित्य–संस्कृति
राजस्थान ग्रंथागार, जोधपुर, 1986

22. सुषमा धवन : हिन्दी उपन्यास
राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
प्रथम संस्करण – 1961

22. सुभाषिनी कपूर : राजस्थान के भील व लोकसंस्कृति
सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, 1990

23. सन्नो खुराना : राजस्थान का लोकसंगीत
सिद्धार्थ पब्लिकेशन, 1995

24. त्रिभुवन सिंह : हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद
हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी
चतुर्थ संस्करण, 2022 वि.सं.

25. त्रिलोचन पाण्डेय : लोकसाहित्य का अध्ययन
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
प्रथम सं. 1978

25. विजयमोहन सिंह : हिन्दी उपन्यास की कहानी
जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स
बेर सराय, नई दिल्ली, 2004

पत्र–पत्रिकाएँ

1. मधुमती, फरवरी, 1982 में छपे लेख